॥ श्रीः ॥

सांबायपरब्रह्मणे नमः ॥

शिवार्चनाचन्द्रिका ॥

श्रीमदप्पयदीक्षितविरचिता ॥

इयं किल,

कण्डदेव्यग्रहाराभिजनेन,

काळीश्वरशिवाचार्येण,

कृष्णतटाकाभिजनानां,

श्री कृष्णशास्त्रिणां अन्तेवासिना,

N. कृष्णशास्त्रिणा—T. M. नारायणशास्त्रिणाच

परिशोधिता,

देवसालपुरी शिवागमसङ्घाध्यक्षैः

कुम्भघोणनगरविराजमान,

शारदाविलासमुद्राक्षरशालायां मुद्रिता,

देवसालनगरे प्रकाशिताच

विजयतेतराम् ॥

दुर्मतिवत्सरस्य कुम्भमासि

1922.

श्रीः ॥

शिवार्चनाचन्द्रिकायाः

विषयसूचिका ॥

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
३९१

श्रीविद्या-साधना

श्रीविद्या का साङ्गोपाङ्ग विवेचन

(प्रथम भाग : १-३ परिच्छेद)

लेखक
डॉ० श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द'

Dr. Shyama Kant Dwivedi
M.A., M.Ed.,
Ph.D., D. Litt.
Vyākarnāchārya

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

प्रथम परिच्छेद : अध्याय १-५

शाक्तमत एवं श्रीसम्प्रदाय

द्वितीय परिच्छेद : अध्याय ६-१५

देवतातत्त्व

तृतीय परिच्छेद : अध्याय १६-२२

मन्त्रतत्त्व

चतुर्थ परिच्छेद : अध्याय २३-३३

• यन्त्रतत्त्व •

चौखम्बा संस्कृत सीरीज
१३९
***

श्रीगौडपादाचार्य-विरचिता

सुभगोदयस्तुतिः

श्रीविद्या-सिद्धान्त-साधना तथा 'राजराजेश्वरी' हिन्दी टीका समन्विता

व्याख्याकार
डॉ० श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द'
एम. ए., पी-एच्. डी., व्याकरणाचार्य
एम. एड., डी. लिट्.
(उ० प्र० संस्कृत एकेडमी द्वारा अनेकधा पुरस्कृत)

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

द्वितीय खण्ड
(मूल श्लोक एवं उनकी व्याख्या)

विषय पृष्ठांक

—०—

शोधप्रकाशन ग्रन्थमाला — १६

सिद्धान्तसारावलिः

त्रिलोचनशिवाचार्यविरचिता

अन्वयार्थाविस्तरार्थाभिध भाषाव्याख्याद्वयसहिता

अन्वयार्थकाराः

**सद्धर्म - उज्जयिनीपीठाधीश्वर - श्री १००८ जगद्गुरु-
मरुलसिद्धशिवाचार्यमहास्वामिनः**

विस्तरार्थकारः सम्पादकश्च

राष्ट्रियपण्डित - श्रीव्रजवल्लभद्विवेदः

शैवभारती-शोधप्रतिष्ठान-निदेशकः

प्रकाशकः

शैवभारती - शोधप्रतिष्ठानम्

जंगमवाड़ीमठ, वाराणसी - २२१ ००१

विषयसूची

ज्ञानपाद

क्रियापाद

योगपाद

चर्यापाद

विविध परिशिष्ट

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला
प्रधान सम्पादक – फतहसिंह, एम०ए०, डी०लिट्०
[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क ११५

गोस्वामिश्रीशिवानन्दभट्टप्रणीत:

सिंहसिद्धान्तसिन्धुः

[प्रथमः खण्डः]

सम्पादकौ

फतहसिंहः एम० ए०, डी० लिट्०

तथा

गोस्वामिश्रीलक्ष्मीनारायणदीक्षितः

प्रकाशक

राजस्थान-राज्य-संस्थापितः

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE,
JODHPUR

१९७० ईस्वी

प्रथमावृत्ति १००० मूल्य

विषयानुक्रमः

प्रथमस्तरङ्गः [पृष्ठ–१-५२]

तृतीयस्तरङ्गः [पृष्ठ–११६-१६१]

चतुर्थस्तरङ्गः (पृष्ठ–१६२-१६८)

पञ्चमस्तरङ्गः [पृष्ठ—१६६-२४५]

षष्ठस्तरङ्गः [पृष्ठ—२४६-२७९]

दीक्षाविधिः

सप्तमस्तरङ्गः [पृष्ठ–२८०-३११]

अष्टमस्तरङ्गः [पृष्ठ–३११-३५०]

नवमस्तरङ्गः [पृष्ठ—३५०-३६६]

दशमस्तरङ्गः [पृष्ठ—३७०-३९६]

एकादशस्तरङ्गः [पृष्ठ–३९७-४२७]

द्वादशस्तरङ्गः [पृष्ठ—४२८-४५०]

त्रयोदशस्तरङ्गः [पृष्ठ—४५१-४६२]

चतुर्दशस्तरङ्गः [पृष्ठ—४६३-४८४]

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रबन्ध-सम्पादक

जिनेन्द्रकुमार जैन

(निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर)

ग्रन्थाङ्क १२३

गोस्वामिश्रीशिवानन्दभट्टप्रणीत :

सिंहसिद्धान्तसिन्धु :

(द्वितीयः खण्डः)

सम्पादक :

गोस्वामिश्रीलक्ष्मीनारायणदीक्षितः

प्रकाशक

राजस्थान-राज्य-संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

Rajasthan Oriental Research Institute,

Jodhpur.

1976

प्रथमावृत्ति 1000 ● मूल्य रु० 16.75

अथ सिंहसिद्धान्तसिन्धोर्द्वितीयखण्डस्य

तरङ्गान्तर्गतानां विषयाणामनुक्रमः

[पञ्चदशस्तरङ्गः-पृष्ठ-१-२०]

[षोडशस्तरङ्गः-पृष्ठ-२१-५६]

[एकोनविंशस्तरङ्गः-पृष्ठ-९४-१२५]

[विंशस्तरङ्गः-पृष्ठ-१२६-१८३]

[चतुर्विंशस्तरङ्गः-पृष्ठ-२४५-३००]

[पञ्चविंशस्तरङ्गः-पृष्ठ-३००-३४७]

[षड्विंशस्तरङ्गः·पृष्ठ-३४८-३९१]

[सप्तविंशस्तरङ्गः-३९१-४४५]

[अष्टाविंशस्तरङ्गः-पृष्ठ-४४५-४७१]

[एकोनत्रिंशस्तरङ्गः- पृष्ठ ४७१-५२३]

[त्रिंशस्तरङ्गः- पृष्ठ-५२४-५५२]

[एकत्रिंशस्तरङ्गः- पृष्ठ-५५२-५७६]

[द्वात्रिंशस्तरङ्गः- पृष्ठ-५७६-५९५]

[त्रयस्त्रिंशस्तरङ्गः- पृष्ठ-५९५-६१६]

[चतुस्त्रिंशस्तरङ्गः- पृष्ठ-६१७-६४१]

[पञ्चत्रिंशस्तरङ्गः- पृष्ठ-६४२-६५४]

[षट्त्रिंशस्तरङ्गः- पृष्ठ-६५५]

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान-सम्पादक

डॉ. पद्मधर पाठक

[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क-१६०

गोस्वामिशिवानन्दभट्टप्रणीत

सिंहसिद्धान्तसिन्धु

(तृतीय खण्ड)

सम्पादक

गोस्वामिलक्ष्मीनारायण दीक्षित

प्रकाशक

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur

1990

प्रथमावृत्ति 1000

मूल्य रु. 82.00

अथ सिंहसिद्धान्तसिन्धोस्तृतीयखण्डस्य तरङ्गान्तर्गतानां विषयाणामनुक्रमः

[सप्तत्रिंशस्तरङ्गः पृष्ठ–१-३६]

विषयः | पृष्ठ संख्या

विषयः | पृष्ठ संख्या

[चत्वारिंशस्तरङ्गः–पृष्ठ–१२८-१७५]

[एकचत्वारिंशस्तरङ्गः–१७६-२३२]

अथ मातङ्गीमन्त्राः–तत्र–

विषयः | पृष्ठ संख्या

[द्विचत्वारिंशस्तरङ्गः-पृष्ठ-२३३-२५३]

विषयः पृष्ठ संख्या

विषयः | पृष्ठ संख्या

विषयः पृष्ठ संख्या

विषयः पृष्ठ संख्या

विषयः | पृष्ठ संख्या

विषयः पृष्ठ संख्या

विषयः | पृष्ठ संख्या

विषयः पृष्ठ संख्या

स्मृति-सन्दर्भः

श्रीमन्महर्षिप्रणीत—धर्मशास्त्रसंग्रहः

मन्वादिदशस्मृत्यात्मकः

प्रथमो भागः

NAG PUBLISHERS

नाग प्रकाशक

११ ए/यू. ए., जवाहर नगर, दिल्ली-७

अथ स्मृतिसन्दर्भस्य प्रथमभागस्य मुद्रितस्मृतीनां नामनिर्देशः

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

स्मृतिसन्दर्भ प्रथम भाग की विषय-सूची

मनुस्मृति के प्रधान विषय

(९७-१००) ब्राह्मण को तपस्या और ब्रह्मविद्या से मोक्ष (१०४)। धर्म की व्यवस्था कौन दे सकता है (१०८)। दस हजार पुरुषों की तुलना में एक आत्मज्ञानी का अधिक मान्य है (११३)।

आत्म ज्ञान अध्यात्म जीवन का निरूपण (११६-१२६)।

नारदीय मनुस्मृति के प्रधान विषय

मनु प्रजापति आदि जिस समय राज्य कर रहे थे उस समय सब सत्यवादी थे और जब धर्म का ह्रास हुआ तो नियन्त्रण के लिये व्यवहार की प्रतिष्ठा की गई। इसी के लिये राजा दण्ड नीति का धारण करनेवाला बनाया गया (१-२)। व्यवहार के निर्णय में साक्षी और लेख दो बातें रक्खी गईं। जब दो पक्षों में विवाद हो तो साक्षी और लेख का विधान हुआ (३-६) जितने प्रकार के व्यवहार और वाद-विवाद होते हैं उनका वर्णन (६-२०)। विवाद का मौलिक कारण काम क्रोध को बतलाया है (२१)। विवाद के निर्णय की विधि (२५-३२)। अर्थ शास्त्र और धर्मशास्त्र के बीच मतभेद होने में धर्मशास्त्र की मान्यता (३३-३४)। कोई भी सन्देह हो तो राजा द्वारा निर्णय कराये जाने का विधान (४०)। विनयन का प्रकार (४४-५०) लेख और गवाही (साक्षी) की सत्यता की जांच (५१-६४)।

विशेष—नारदी-स्मृति में अध्यायक्रम नहीं रहने से प्रकरण ही लिखा गया है।

अत्रिस्मृति के प्रधान विषय

अत्रिसंहिता के प्रधान विषय

विष्णुस्मृति के प्रधान विषय—

अध्याय ७२ से ८६ तक श्राद्ध का वर्णन आया है ।

अध्याय ८७, ८८ में दान वर्णन—उर्ध्वमुखी गाय का दान ।

सम्वर्तस्मृति के प्रधान विषय

दक्षस्मृति के प्रधान विषय

अङ्गिरसस्मृति के प्रधान विषय

नहीं जाना चाहिये (५९-६३)। जिसका अन्न नहीं खाना चाहिये उसका खा लेने पर चान्द्रायण (६४-६५)। जो कन्या दुबारा ब्याही जाय उसका अन्न खाने से दोष (६६)। जिन-जिन का अन्न आने में दोष हो उसका वर्णन (६७-७२)। राजा के अन्न से तेज का ह्रास, शूद्र के अन्न सेवन से ब्रह्मचर्य का ह्रास और सूतक का अन्न बिलकुल दूषित (७३)।

शातातपस्मृति के प्रधान विषय

उपपातक के चिह्न पांच जन्म तक, सामान्य पापों का तीन जन्म तक। दुष्ट कर्मों से जो रोग होते हैं उनकी जप, देवार्चन, हवन आदि से शान्ति की जाती है (४)। पहले जन्म के किये पाप नरकभोगगति के अनन्तर बीमारी के रूप में आते हैं उनका शमन जप दानादि से होता है (५)। महापातकादि से होनेवाले रोग कुष्ठ, यक्ष्मा, ग्रहणी, अतिसार आदि होते हैं (६-७)। उपपातक से श्वास, अजीर्ण आदि

॥ स्मृतिसन्दर्भ प्रथम भाग की विषय-सूची समाप्त ॥

॥ शुभम् ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ स्मृतिसन्दर्भस्य द्वितीयभागस्थ मुद्रितस्मृतीनां नामनिर्देशः ।

मुद्रा करकाराघातकातरा क्वापि भारती ।
करुणार्द्रकरस्पर्शैः सुधियः सान्त्वयन्तु ताम् ॥१॥
स्मृतिवचनमयेऽस्मिन् संग्रहेचेदशुद्धिः ।
सदय हृदयमद्भिः शोधनीया महद्भिः ॥
प्रभवतु परितुष्टिः सर्वथाऽलोकनेन ।
मिलितकरयुगाभ्यां याचये श्रीमहेशः ॥२॥

इतिविदुषामनुचरस्य—
श्रीमहेश्वरमिश्रस्य
(मैथिलस्य)

"मानुषाणां हितं धर्मं वर्तमाने कलौयुगे
शौचाचारं यथावच्च वद सत्यवतीसुत !"

वर्तमान कलियुग में मनुष्यमात्र का हित जिससे हो वह धर्म कहिए और ठीक-ठीक रीति से शौचाचार की रीति भी बतला दीजिये—ऋषियों के प्रश्न करने पर व्यासजी ने उत्तर दिया कि कलियुग के सार्वभौम धर्म के विकाश करने में अपने पिता पराशरजी की प्रतिभा शक्ति की सामर्थ्य कही यतः पराशरजी निरन्तर एकान्त बदरिकाश्रम की तपोभूमि में आसीन हैं। तपोमय भूमि में तपस्यारूपी साधन के बिना कलियुग के धर्म, व्यवहार, मर्यादा पद्धति का पर्षदीकरण अबैध सूचित किया ऋषियों ने इस बात पर विचार किया कि कलियुग के मनुष्य किसी धर्म मर्यादा की पर्षद बुलाने की क्षमता नहीं रख सकते हैं यावत् तपोमय जीवन से इन्द्रियों की उपरामता न हो जाय यतः इन्द्रिय भोग विलासिता के जीवनवाले वेद शास्त्रपारंगता प्राप्त करने पर भी धर्म, न्याय विधिको नहीं बना सकते हैं। अतः विधि, नियम रूपी धर्म व्यवहार के लिये

बृहत् पराशरस्मृति के प्रधान विषय

है। सतयुग को ब्राह्मण युग, त्रेता को क्षत्रिय युग, द्वापर को वैश्य युग तथा कलियुग को शूद्र युग बताया है। वर्णाश्रम धर्म की क्षमता उस भूमि में बताई है जिसमें कृष्णसार मृग स्वभावतः स्वतंत्रता पूर्वक विचरण करते हैं। हिमालय और विन्ध्याचल के मध्य देश को पावन देश बताया है और अन्य देश जहाँ से नदियाँ साक्षात् समुद्रगामिनी हैं उन्हें भी तीर्थस्थान बताया है। इसमें पराशरजीने अपने पुत्र व्यास को द्विज कर्म और षट्कर्म वर्ण धर्मकी प्रशंसा और गो वृषभ का पालन पशुपालन विधि

षट्कर्म वर्णधर्माश्च प्रशंसा गोवृषस्य च।
अदोह्य-वाह्यौ यौ तत्र क्षीरं क्षीरप्रयोक्त्रिणा॥
अमावास्या निषिद्धानि ततश्च पशुपालनम्॥

विवाह संस्कार, व्रतचर्यादि, पुत्रजन्म, अखिल गृहस्थधर्म का उपदेश, भक्ष्याभक्ष्य की व्यवस्था, द्रव्य शुद्धि, अध्ययनाध्यापन का समय, श्राद्ध कर्म, नारायणबली, सूतक तथा अशौच, प्रायश्चित्त विधान, दानविधि तथा फल, भूमिदान की प्रशंसा, इष्टापूर्त कर्म, ग्रहों की शान्ति, वानप्रस्थ धर्म, चारों आश्रम, दो मार्ग, अर्चि तथा धूम मार्ग इन सबका वर्णन यथानुपूर्व वृहत् पराशर के द्वादश अध्याय में बताया है (३६-६४)।

यस्याः शिरसि ब्रह्माऽऽस्ते स्कन्धदेशे शिवः स्थितः।
पृष्ठे नारायणस्तस्थौ श्रुतयश्चरणेषु च॥
या अन्या देवताः काश्चित्तस्या लोमसुताःस्थिताः।
सर्वदेवमया गावस्तुष्येत्तद्भक्तितो हरिः॥

स्पृष्टाश्च गावः शमयन्ति पापं,
संसेविताश्चोपनयन्ति वित्तम्।
ता एव दत्तास्त्रिदिवं नयन्ति,
गोभिर्नतुल्यं धनमस्ति किञ्चित्॥

कृषि के सम्बन्ध में बहुत सुन्दर वर्णन किया गया है। अन्त में यह बताया है—

५ "कृषेरन्यतमोऽधर्मो न लभेत्कृषितोऽन्यतः।
न सुखं कृषितोऽन्यत्र यदि धर्मेण कर्षति" ॥

अर्थात् कृषि के तुल्य दूसरा कोई धर्म नहीं एवं कृषि के तुल्य और कोई व्यवहार इतना लाभदायक नहीं। कृषि करने में ही बड़ा सुख है यदि धर्मानुकूल कृषि की जाय। (१५६-१६५)।

कन्याओं के आठ प्रकार के विवाह होते हैं। अपनी जाति में वर के लक्षण देखकर वस्त्राभूषण से सुसज्जित कर जो कन्या दी जाती है उसको ब्राह्म विवाह कहते हैं। लड़के का लक्षण देखना परमावश्यक है। जिसके पेशाब में फेन निकले वह पुरुष होता है। ऐसा न होने पर नपुंसक होता है। यज्ञ करते हुए यज्ञ करनेवाले को वस्त्राभूषण से सुसज्जित जो कन्या दी जाती है इसे दैव विवाह कहते हैं। वर कन्या के समान हो और गुण-

अध्याय	प्रधानविषय	पृष्ठाङ्क
७	श्राद्ध कर सकती है; इष्ट परिजन अपने मित्रों का भी श्राद्ध कर सकते हैं। लड़की का लड़का अर्थात् दौहित्र भी श्राद्ध कर सकता है और पार्वण श्राद्ध का वर्णन आया है। एकोद्दिष्ट श्राद्ध पुत्र ही अपने पिता और पितामह का कर सकता है (४०-६१)। श्राद्ध में शूद्रान्न का निषेध और स्त्री को भोजन करना निषेध बताया गया है (६२-८३)। एकोद्दिष्ट श्राद्ध का विधान तथा किस किस काल में श्राद्ध करना चाहिये उन कालों का वर्णन। जैसा कुतुप, (मध्याह्न) रोहिणी, संक्रान्ति अमावास्या, व्यतीपात आदि का है (८४-१०१)। मलमास में भी श्राद्ध कर सकते हैं इसका निर्णय किया गया है और नित्य श्राद्ध का भी निर्णय किया है (१०२-१०५)। श्राद्ध की तिथि का निर्णय, सगोत्र ब्राह्मण को श्राद्ध में भोजन कराने का निषेध (१०६-११६)। वृद्धि श्राद्ध (नान्दीमुख) शुभ कार्य में जो पितरों का श्राद्ध होता है उनके उपयुक्त जो पात्र है उनका निर्णय, वट वृक्ष की लकड़ी और बिल्वपत्र के पत्ते पर भोजन करने का निषेध बताया है (११७-१२२)। श्राद्ध में कौन पुष्प किसको चढ़ाने चाहिये अथवा नहीं	

अध्याय	प्रधान विषय	पृष्ठाङ्क
८	कन्या कुमारी को कोई कुत्ता यदि चाट ले तो उसकी शुद्धि जिधर सूर्य जा रहा हो उधर देखने से हो जाती है [२८०-२८१]। कोई कुत्ता किसी को काट देवे तो उसकी शुद्धि की विधि बताई है [२८२-२८४]। गुरु को 'तू' बोलना और अपने से बड़ों को 'हूँ हूँ' बोलना इस पाप की शुद्धि बताई है [२८५]। विवाद में स्त्री से जीतकर और स्त्री को मारना उसका प्रायश्चित्त [२८६-२८७]। प्रेत को देखकर स्नान से शुद्धि का वर्णन [२८८-२९३]। १०८ बार गायत्री मंत्र जपने से शुद्धि वर्णन [२९४-२९५]। मुंह से गिरे हुए को फिर खा ले तो उसकी शुद्धि बताई है [२९६-२९८] कहीं जल पर पेशाब आदि के छींटे पड़ जायें तो उसकी शुद्धि [२९९-३००]। नीच पुरुष, पापी पुरुष और पतित के साथ बात करने से जो पाप लगता है तो अपने दाहिने कान को तीन बार छू लेने से शुद्धि [३०१-३०४]। घर में मक्खियों के आने से, बच्चों, स्त्रियों और वृद्धों के बोलने से यदि थूक के छींटे पड़ जाये तो कोई दोष नहीं होता है [३०५-३१०]। जो पलास वृक्ष और शीशम के वृक्ष की दन्तधावन करता है और नाई के देखे	

यथा—

"अश्वत्थमेकं पिचुमन्दमेकं न्यग्रोधमेकं दश चिंचिणीश्च।
षट् चम्पकं तालशतत्रयं च पश्चाम्रवृक्षै नरकं न पश्येत्"॥

श्री बृहत्पराशर स्मृतिस्थ विषयानुक्रमणिका समाप्ता।

वृद्धहारितस्मृति के प्रधान विषय

अध्याय प्रधानविषय पृष्ठाङ्क

७ पक्ष की एकादशी में उपवास व्रत, रात्रि जागरण और द्वादशी को द्वादशाक्षर मंत्र का जप, भगवान् का पूजन, देवर्षियों के तर्पण का विधान बताया है (७०-६०)। वैष्णवी इष्टी (यज्ञ) का विधान बताया है। उनके मन्त्र, उनकी सामग्री और वैष्णव गायत्री का जप बताया है (६१-१०५)। शुक्ल-पक्ष की द्वादशी, संक्रान्ति और ग्रहण के समय संकर्षणादि की मूर्ति, वासुदेव की मूर्ति का पूजन और किस प्रकार किस देवता की मूर्ति बनानी तथा पूजन बताकर वैभवी इष्टी का विधान बताया है। यह वैष्णवी यज्ञ जो विष्णु भक्त न करे उसको पाप बताया है। इसमें कहाँ पर किस देवता की स्थापना करनी चाहिये उनका वर्णन बताया है। शुक्लपक्ष की शुक्रवारीय द्वादशी को पाद्मी इष्टी का विधान बताया है। इसमें भगवान् का उत्सव और उसका माहात्म्य बताया है। जलशायी भगवान् का पूजन बताया है और इनके मन्त्र बताये हैं। दोलयात्रा उत्सव का वर्णन बताया है। भगवान् का विशेष प्रकार से पूजन, विशेष प्रकार से भोग

पौराणिक तथा स्मृति के मन्त्रों से भगवान् विष्णु का पूजन और नवधा भक्ति का वर्णन, ध्यानजप, मन्त्रजप का वर्णन, तप्तचक्रांक धारण का माहात्म्य और वैष्णव धर्मवालों की प्रशस्ति बताई है।

"दानं दमः तपः शौचं आर्जवं शान्तिरेव च
आनृशंसं सतां संग पारमैकान्त्य हेतवः।
वैष्णवः परमैकान्तो नेतरो वैष्णवःस्मृतः॥

पूजा का माहात्म्य और भिन्न भिन्न प्रकार से जो भगवान् विष्णु की पूजा उत्सव यज्ञ दान बताये हैं, इन सबका तात्पर्य यह है कि भक्त पर विष्णु भगवान् की कृपा हो जाय। जिसपर वैष्णव संस्कारों से विष्णु भगवान् की कृपा या आशिर्वाद हो जाता है उनका जीवन-चरित्र ऐसा होता है—दान करना, दम इन्द्रियों का दमन, तप तपस्या, शौच पवित्रता, आर्जव सरलता, शान्ति क्षमा, आनृशंसं सत्य वचन, सज्जनों का

स्मृति सन्दर्भ द्वितीय भाग की विषय-सूची समाप्त।

॥ शुभम् ॥

स्मृति-सन्दर्भः

श्रीमन्महर्षिप्रणीत—धर्मशास्त्रसंग्रहः

याज्ञवल्क्यादिसप्तदशस्मृत्यात्मकः

तृतीयो भागः

NAG PUBLISHERS

नाग प्रकाशक

११ ए/यू. ए., जवाहर नगर, दिल्ली-७

॥ श्रीगणेशोऽव्यात् ॥

अथ स्मृतिसन्दर्भस्य तृतीयभागस्थ मुद्रितस्मृतीनां नामनिर्देशः ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

स्मृतिसन्दर्भ तृतीयभाग की विषय-सूची

याज्ञवल्क्य स्मृति के प्रधान विषय

अध्याय	प्रधानविषय	पृष्ठाङ्क
२	भाईयों का संस्कार नहीं हुआ उनका पैतृक धन से संस्कार और निर्वाह—बहनों को अपने हिस्से से चौथाई देकर विवाह करे (१२२-१२७)। जाति विभाग से बटवारा, अयोग से जो लड़का पैदा किया गया उसका भार (१२८-१३०)। बारह प्रकार के पुत्रों का वर्णन (१३१-१३५)। दासी पुत्र का हक और अपुत्र के धन विभाग का नियम (१३६-१३९)। वानप्रस्थ, संन्यासी और आचार्य के धन का विभाग (१४०)। समश्रृष्टि (मिले हुए) भाईयों का विभाग और उन लड़कों का वर्णन जिनको पिता की जायदाद में भाग नहीं मिलता है। जिनको भाग न मिला उनके लड़कों को मिल सकता हैं (१४१-१४३)। उनके लड़कों और स्त्री को मिल सकता है (१४४-१४५)। स्त्री धन की परिभाषा तथा स्त्री धन को कोई नहीं ले सकता किन्तु आपत्ति काल में और धर्म कार्य में तथा बिमारी में स्त्री का पति स्त्री के धन को ले सकता है (१४६-१५१)। जो पैतृक धन को छिपा दे उनका निर्णय साक्षी लेख और भाई बिरादरी में पूछकर करना चाहिये (१५२)।	

यति सम्पूर्ण प्राणीमात्र का हित करनेवाला, शान्त और दण्ड धारण करने वाला हो। यति के सब पात्र बाँस और मिट्टी के होते हैं इनकी शुद्धि जल से हो जाती है। यति को राग द्वेष का त्याग कर अपने आपकी शुद्धि जिससे आत्मज्ञान का विकाश हो ऐसा करना चाहिये।

सत्यमस्तेयमक्रोधो ह्रीः शौचं धीर्धृतिर्दमः।
संयतेन्द्रियता विद्या धर्मः सार्व उदाहृतः॥

सत्य, अस्तेय, अक्रोध, पवित्रादि में सब धर्म बतलाये हैं (४६-६६)। अध्यात्म ज्ञान का प्रकरण आया है। जैसे तप्त लौह पिण्ड से चिनगारी निकलती है उसी प्रकार उस प्रकाश पुंज आत्मा से यह समष्टि व्यष्टि संसार रूपी चिनगारी निकलती है। आत्मा अजर अमर है शरीर में आने से इसे जन्म लेना कहते हैं। सूर्य की तपन से वृष्टि फिर औषधि तथा अन्न होकर शुक्र हो जाता है। स्त्री पुरुष के संयोग से यह पञ्चधातु मय शरीर पैदा होता है। एक एक तत्त्व से

अध्याय	प्रधानविषय	पृष्ठाङ्क
३	मद्य पीनेवाला तथा जो इनके साथ रहता है वह भी महापातकी होता है। इसके बाद आगे के श्लोकों में उपपातकों की गणना की है। महापातकी को आमरणान्त प्रायश्चित्त बतलाया है। अन्य पापों की शुद्धि के लिये चान्द्रायण आदि व्रत बतलाये हैं। गर्भपात और भर्तृ हिंसा स्त्री के लिये महापाप है। शरणागत को मारने वाले की बच्चों को मारनेवाले, स्त्री के हिंसक और कृतघ्न की कभी शुद्धि नहीं होती है। सान्तपन कृच्छ्र, पर्णकृच्छ्र, पादकृच्छ्र, तप्तकृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, कृच्छ्रातिकृच्छ्र, तुला पुरुष, चान्द्रायण व्रत और कृच्छ्रचान्द्रायणादि व्रत बतलाये गये हैं। ऋषियों ने याज्ञवल्क्य से धर्मों को सुनकर यह कहा कि जो इसको धारण करेगा वह इस लोक में यश को प्राप्त कर अन्त में स्वर्गलोक को प्राप्त होगा। जो जिस कामना से धारण करेगा उसकी कामनाय पूर्ण सफल होंगी। ब्राह्मण इसको जानने से सत्पात्र, क्षत्रिय विजयी, वैश्य धनधान्य सम्पन्न, विद्यार्थी विद्यावान् होता है। इसको जानने और मनन करने से अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त होता है (२०६-२३४)।	

आपस्तम्बस्मृति के प्रधान विषय

लघुशङ्खस्मृति के प्रधान विषय

शङ्खस्मृति के प्रधान विषय

लिखितस्मृति के प्रधान विषय

इष्ट के करने से स्वर्ग प्राप्ति और पूर्त से मोक्ष प्राप्ति का वर्णन किया है। वापी, कूप, तड़ाग, देव मन्दिर तथा पतितों का जो उद्धार करें उसे पूर्त तथा अग्निहोत्र वैश्वदेवादि कार्य करें उसे इष्ट कहते हैं। इष्टापूर्त कर्म का विधान तथा लक्षण बताया है।

गङ्गा में अस्थि प्रवाह का माहात्म्य तथा एकोद्दिष्ट श्राद्ध का वर्णन, श्राद्ध में भोजन करनेवालों के

शङ्खलिखित स्मृति के प्रधान विषय

वशिष्ठ स्मृति के प्रधान विषय

औशनस संहिता के प्रधान विषय

औशनस स्मृति के प्रधान विषय

बृहस्पति स्मृति के प्रधान विषय

इन्द्र ने शत यज्ञ समाप्त कर गुरु बृहस्पति से दान माहात्म्य एवं उत्कृष्ट दान पूछा। उत्तर में गुरु बृहस्पति ने सुवर्ण दान और भूमिदान का माहात्म्य बताया किन्तु भूमिदान सुपात्र विद्यावान् तपस्वी ब्राह्मण को ही देना बताया, अपात्र (मूर्ख अतपस्वी) को देने से पाप भी बताया है (१-८१)।

लघुव्यास स्मृति के प्रधान विषय

प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त में स्नान करना चाहिये। स्नान के पूर्व जिन वृक्षों के दतौन करने हैं उनका नाम तथा सूर्योपस्थान सन्ध्या प्रति दिन करने का

समुद्र तट पर ध्यानावस्थित देवल से ऋषियों ने पूछा कि महाराज ! म्लेच्छों के साथ जिनका सम्पर्क हो गया है अर्थात् जो पुरुष बलात् या स्वेच्छा से धर्म परिवर्तन कर चुका है उसको क्या करना चाहिये जिससे वह पुनः अपनी जाति में पावन हो जाय। इसके उत्तर में ऋषि देवल ने उन सबका प्रायश्चित्त विभिन्न प्रकार से बताया। प्रारम्भ में अपेय पान अभक्ष्य भक्षण से सब प्रकार के सांसर्गादि पातित्य कर्मों में पृथक्-पृथक् प्रायश्चित्त कर सबकी शुद्धि बताई है। प्राय-श्चित्तों के करने पर अन्त में गङ्गा स्नान से शुद्धि बताई है। इस स्मृति में जाति शुद्धि, देह शुद्धि और समाज शुद्धि पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है (१-६०)।

इस स्मृति में एक ही श्राद्ध कर्म का पूर्णाङ्ग पूर्ण विधि से वर्णन किया गया है। शुक्राचार्य के कथन से श्राद्धकल्प में उथल पुथल हो गई थी। श्राद्ध कर्म के न करने से द्विजाति बलहीन और राक्षस बल हरण करनेवाले हो गये थे। अतः श्राद्धकल्प पर प्रजापति श्राद्ध के सम्बन्ध में श्राद्ध के भेद, श्राद्ध विधि,

लघ्वाश्वलायन स्मृति के प्रधान विषय

आश्वलायन गृह्यसूत्र के निर्माता भी हैं। इस स्मृति में शंख, औशनस, व्यास और प्राजापत्यादि स्मृतियों की रीति पर व्यवहार प्रकरण का स्थान नहीं है केवल धार्मिक और सांस्कृतिक आचार का ही विस्तृत वर्णन है। इससे इन स्मृतियों की प्राचीनता का अनुमान होता है। यथा— "धर्मैकताना पुरुषाः यदासन् सत्यवादिनः" जब जनता धर्मपरायण रही उस समय सब सत्यवादी होते थे। इस कारण व्यवहार अर्थात् दण्डदापन राजशासन विधि की आवश्यकता न होने से व्यवहार प्रकरण का विस्तार नहीं रखा गया है। इस अध्याय में मुनियों ने आश्वलायन आचार्य से द्विजातियों के धर्म कहकर मनुष्यों के सांस्कृतिक जीवन के आचार पर प्रश्न किया, साथ ही यह बताया कि इस प्रकार के आचरण करनेवाले मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। द्विज शब्द यहाँ पर मनुष्य शब्द का वाचक है। प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त में उठना, शौचाचार एवं स्नान के मन्त्रों का वर्णन किया है (१-३९)। सूर्यार्घ्य, सायं, प्रातः और

बौधायन स्मृति में धर्म की प्रधानता अर्थ की गौणता प्राचीन वैदिकाचार का वर्णन है। इसमें मुख्य तीन प्रश्नों का निर्णय है। प्रथम प्रश्न—"उपदिष्टो धर्मः प्रति वेदम्" "तस्यानुव्याख्यास्यामः" "स्मार्तो द्वितीयः" "तृतीयः शिष्टागमः"। "उपदिष्टो धर्मः प्रतिवेदम्" इसकी व्याख्या १२ अध्यायों में क्रमशः वर्णन की गई है। "शिष्टागम" की परिभाषा स्वयं बौधायन ने की है। "विगतमत्सर-निरहंकारकुम्भीधान्या अलोलुपदम्भदर्पलोभमोह-क्रोधविवर्जिताः" धर्म का ज्ञान वेदों से होता है। वेद के अभाव में स्मृति ग्रन्थों से शिष्ट पुरुषों द्वारा परिषद् का निर्णय। परिषद् का निर्णय इस प्रकार बताया है—

चातुर्वैद्यं विकल्पी च अङ्गविद् धर्मपाठकः।
आश्रमस्थास्त्रयो विप्राः पर्षदेषा दशावरा॥

॥ स्मृति संदर्भ के तृतीय भाग की विषय-सूची समाप्त ॥

॥ शुभम् भूयात् ॥

स्मृति - सन्दर्भः

श्रीमन्महर्षि प्रणीत—धर्मशास्त्रसंग्रहः गौतमादि-
त्रयोदशस्मृत्यात्मकः

चतुर्थो भागः

NAG PUBLISHERS

नाग प्रकाशक
११ ए/यू. ए., जवाहर नगर, दिल्ली-७

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ स्मृतिसन्दर्भस्थ चतुर्थ भागे सङ्कलितस्मृतीनां

नामनिर्देशः

विशेषः—द्वितीय वशिष्ठस्मृतेर्विषयवैशिष्ट्यात्पृथगुपन्यासः ।

* श्रीगणेशाय नमः *

स्मृति-सन्दर्भ

चतुर्थ भाग

की

विषय-सूची

गौतम स्मृति के प्रधान विषय

वृद्धगौतमस्मृति के प्रधान विषय

बृहद्यम स्मृतिः

बृहद्योगीयाज्ञवल्क्यस्मृतिः

ज्ञानंप्रधानं न तु कर्महीनं कर्मप्रधानं न तु बुद्धिहीनम्।
तस्माद्द्वयोरेव भवेतसिद्धिर्नह्येकपक्षो विहगःप्रयाति ॥२९।

गवां सर्पिः शरीरस्थं न करोत्यंगपोषणम्।
निःसृतं कर्मचरितं पुनस्तस्यैवभेषजम् ॥३०॥

एवं सति शरीरस्थः सर्पिर्वत् परमेश्वरः।
विना चोपासनादेव न करोति हितं नृषु ॥३१॥

ब्रह्मोक्तयाज्ञवल्क्यसंहिता

(१५५—१६०)। श्राद्ध के नियम और उनके विरुद्ध चलने पर चान्द्रायण व्रत का विधान (१६१—१६६)।

श्राद्धका भोजन, अन्न और ब्राह्मण का विस्तार से वर्णन (१६७—२०७)। पैर धोने से पिण्ड विसर्जन तक श्राद्ध का विषय माना जाता है (२०८-२१०)। श्राद्ध में निषिद्ध पदार्थों का उल्लेख (२११—२१२)। वानप्रस्थ यतियों के श्राद्ध के नियम (२१३—२१७)। सन्ध्या के नियम (२१८-२२३)। श्राद्ध में भोजन बनाने के अधिकारी (२२४—२४३)। श्राद्ध के अन्न का निर्णय (२४४-२६६)। जिनका एकोद्दिष्ट श्राद्ध ही होता है उनका वर्णन (२६७—२८५)। श्राद्ध में किन-किन अंगों का निषेध और विधान है (२८६—३१७)। वर्ष-वर्ष में श्राद्ध करने का महत्त्व (३१८—३२७) श्राद्ध करने के स्थान का वर्णन (३२८—३३७)। श्राद्ध करने के नियम, सामान्य व्यवहार, यज्ञ, दान, जप, तप, स्वाध्याय, पितृतर्पण की विशेष विधियां (३३७—३६६)।

स्मृतिसन्दर्भ के चतुर्थ भाग की विषय सूची

समाप्त

॥ शुभम्भूयात् ॥

स्मृति - सन्दर्भः

श्रीमन्महर्षिप्रणीत धर्मशास्त्रसंग्रहग्रन्थः
कपिलादिदशस्मृत्यात्मकः

पञ्चमोभागः

NAG PUBLISHERS

नाग प्रकाशक
११ ए/यू. ए., जवाहर नगर, दिल्ली-७

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ स्मृतिसन्दर्भस्थ पञ्चमभागे सङ्कलित-स्मृतीनां नामनिर्देशः

विशेष द्र०—द्वितीयाङ्गिरसस्मृतेर्विषयवैशिष्ट्येनपृथगुपन्यासः

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

स्मृतिसन्दर्भ पञ्चम भाग

की

विषय-सूची

कपिलस्मृति के प्रधान विषय

वाधूलस्मृति के प्रधान विषय

दूसरे के बनाये हुए सरोवर में स्नान करने से उस बनानेवाले के दुष्कृत (पाप) स्नानार्थी को लगते हैं अतः उसमें न नहावे (६४)। सोकर उठने से लार-पसीनों से भरा हुआ मनुष्य अशुद्ध है उसे स्नानादि से शुद्ध होनेपर ही नित्यकर्म सन्ध्योपासन देवर्षि पितृ तर्पण करना चाहिये। सूर्योदय के पूर्व प्रातःकाल का स्नान प्राजापत्य यज्ञ के समान है और आलस्यादि को नष्ट कर मनुष्य को उन्नत विचार और कार्यशील बना देता है। स्नान के समय पहने वस्त्र से शरीर को न मले न पोंछे ही इससे शरीर कुत्ते के द्वारा सूंघा हुआ हो जाता है जो फिर स्नान करने से ही शुद्ध होता है (६५-६८)।

स्नान मूलाः क्रियाः सर्वाः सन्ध्योपासनमेव च।
स्नानाचारविहीनस्य सर्वाः स्युः निष्फलाः क्रियाः ॥६७॥

सम्पूर्ण क्रियायें स्नान के अन्तर्गत ही हैं। रविवार को उषा काल में स्नान करने से हजार माघ स्नान का फल और जन्म दिन के नक्षत्र में वैधृत पुण्यकाल, व्यतीपात और संक्रान्ति पर्वों में, अमावस्या को नदी में स्नान कोटि कुलों का उद्धार कर देता है। प्रातः स्नान करनेवाले को नरक के दुःख कभी नहीं देखने

और सायं काल सरस्वती का ध्यान करना चाहिये। प्रतिग्रह, अन्नदोष, पातक और उपपातकों से गायत्री मन्त्र के जपनेवाले की गायत्री रक्षा करती है इसलिये इसका नाम गायत्री है।

प्रतिग्रहादन्नदोषात्पातकादुपपातकात्।
गायत्री प्रोच्यते यस्माद् गायन्तं त्रायते यतः ॥११५॥

सविता को प्रकाशित करने से इसका नाम सावित्री और संसार की प्रसवित्री वाणी रूप से होने से इसका इसका नाम सरस्वती अन्वर्थ है (जैसा नाम वैसा गुण) (११२-११६)।

आपोहिष्ठेत्यादि मार्जन मन्त्रों में नौ ओङ्कार के साथ जो मार्जन किया जाता है उससे वाणी, मन और शरीर के नवों दोषों का क्षय हो जाता है (११७-१२०)। सायंकाल में अर्घ्य जल में न देवे जहाँ सन्ध्या की जाय वहीं जप भी हो। वेदोदित नित्यकर्मों का किसी कारण अतिक्रमण हो जाय तो एक दिन बिना अन्न खाये रहना चाहिये और १०८ गायत्री मन्त्र के जप दोनों सन्ध्या में विशेष रूप करे (११-१२६)।

सूतक और मृतक के आशौच में भी सन्ध्या कर्म न छोड़े प्राणायाम को छोड़ कर सारे मन्त्रों को मन से

करता है उन्हें ही यदि धर्म के लिये करे तो संसार में कोई दुःखी नहीं रह सकता।

अर्थार्थी यानि कर्माणि करोति कृपणो जनः।

तान्येव यदि धर्मार्थं कुर्वन् को दुःखभाग्भवेत् ॥१८३॥

भिन्न-भिन्न वस्तुओं एवं पतितों के छू जाने से स्नान का विधान किसी वस्तु को बेचने पर स्नान का विधान आवश्यक है (१८४-१८८)।

श्रुति स्मृति के आदेश प्रभु की आज्ञा है इनको न माननेवाले को भगवद्भक्त बनने का अधिकार नहीं (१८९)। सच्चे अन्धे का लक्षण—जो श्रुति स्मृति का अध्ययन, मनन और अनुशीलन कर उनके मार्ग का अनुष्ठान नहीं करता वह अन्धा है (१९०-१९१)। पापी को धर्मशास्त्र अच्छे नहीं लगते (१९२)।

सच्चा ब्राह्मण वही है जो ऋण करने से ऐसे डरता है जैसे सर्प को देखकर। सम्मान से ऐसे दूर रहता है जैसे लोग मरने से और स्त्रियों के सम्पर्क से जैसे मृतक से घृणा होती है वैसे दूर रहता है। ब्राह्मण वह है जो शान्त हो, दान्त हो, क्रोध को जीतनेवाला हो, आत्मा पर पूरा अधिकार करनेवाला हो, इन्द्रियों का निग्रह कर चुका हो। ब्राह्मण का यह शरीर उपभोग के लिये नहीं बल्कि इस शरीर में क्लेश के साथ तपस्या करते हुए

॥ वाधूलस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

विश्वामित्रस्मृति के प्रधान विषय

मङ्गलाचरण (१) ब्राह्ममुहूर्त, उषःकाल, अरुणोदय और प्रातःकाल के मान का वर्णन (३)। नित्य और नैमित्तिक तथा काम्य कर्म समय पर करने से सत्फल देते हैं (४) ब्राह्ममुहूर्त में शौच से निवृत्त होकर अरुणोदय के पहले आत्मा के लिये स्नान करे प्रातः जप करे और सूर्य को देखकर उपस्थान करे (६)। काल बीतने पर कोई कर्म करने से फल नहीं मिलता यदि किसी कारण से काल का लोप हो गया तो तीन हजार जप करने से उसका प्रायश्चित्त विधान है। दुःसङ्ग या निद्रा अथवा प्रमाद आलस्य से काल का लोप करने से प्रायश्चित्त बतलाया गया है (८-१४)। जो व्यक्ति समय पर नित्यकर्मादि को करता है वह सम्पूर्ण लोगों पर जय पाकर अन्त में विष्णुपुर में जाता है (१६)।

प्रातः स्नान सन्ध्या और जप अवश्य कर्म है। जैसे समय पर वर्षा होते ही बीज बोने से अच्छी खेती होती है वैसे ही नियुक्त कर्मों को नियुक्त समय पर करने से सद्यः सिद्धि मिलती है (१७-२१)। उत्तम, मध्यम और

अध्याय प्रधान विषय पृष्ठाङ्क

वैश्वदेव में कोद्रव (कोदो), मसूर, उड़द, लवण और कड़वे द्रव्यों को काम में न लेवे (१-२)। नाना प्रकार की बलि करने से नाना प्रकार के काम्य कर्मों की सिद्धियां होती हैं। द्विजों के लिये पाँच ही क्रम से बलि का विधान है। पहले उपवीत, दूसरे निवीत, तीसरे पितृमेध के लिये बलि की जाती है (३-१२)।

वैश्वदेव में ताजा अन्न ही काम में लिया जाय (१३-१६)। वैश्वदेव मन्त्र के साथ हो या बिना मन्त्र के इसे किसी भी रूप में करना चाहिये ; क्योंकि इसको करनेवाला अन्नदोष से लिपायमान नहीं होता (१७-२४)। पञ्चशूनाजनित पापों को जैसे, चूल्हा, चक्की, जल भरने का स्थान, झाड़ू आदि के दोषों को दूर करने के लिये इसकी बड़ी आवश्यकता है (२५-३६)।

वैश्वदेव को करने से सकल दोषों का निवारण होता है। नित्य होम का वर्जन सूतक एवं मृतक में बताया

गया है। वैश्वदेव के काल का वर्णन। वैश्वदेव माहात्म्य वर्णन (४०-८३)।

॥ विश्वामित्रस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

लोहितस्मृति के प्रधान विषय

विवाहाग्नि में स्मार्त कर्मों का वर्णन। जिस स्त्री के साथ सर्वप्रथम गार्हस्थ्य सम्बन्ध जुड़ता है वह धर्मपत्नी है। उसके विवाह के समय की अग्नि का ही सभी कार्यों में उपयोग इष्ट है (१-११)। अन्य भार्याओं की अग्नि गौण है उनमें वेदोक्त एवं तन्त्रोक्त प्रयोग नहीं होना चाहिये। यदि उन्हें काम में भी लें तो अमन्त्रक ही प्रयोग होना चाहिये (१२-१९)।

सभी स्मार्त कर्म, स्थालीपाक, श्राद्ध, या जो भी नैमित्तिक हो वह सारा प्रथम धर्मपत्नी की अग्नि में ही हो। (२०-२९)।

पृथग्ग्न अग्नियों का एकत्र संसर्ग का विधिपूर्वक

के प्रमुख व्यक्तियों के सामने इष्ट, भाई-बन्धुओं को बुलाकर बिना पुत्र के माता को विधि-विधान से देना चाहिये। जो पुत्र समाज के गोत्र कुल में से दत्तकरूप में लिया जाय वास्तव में वह अपने पुत्र तुल्य है और अपुत्रक माता-पिता के लिये सर्वथा दैवपैत्र्य कार्य के लिये ग्राह्य है। उस पुत्र का औरस पुत्रों के समान ही सारा अधिकार होता है (६०-७१)।

यदि दत्तक पुत्र लेने के बाद उन माता-पिता के सन्तान हो जाय तो वह चतुर्थ भाग का स्वामी होने का अधिकार रखता है (७२-७४)। जब आदि धर्मपत्नी के न रहने व पुत्र न होने पर दूसरी पत्नी से जो पुत्र होगा वही ज्येष्ठत्व का अधिकारी होगा और अवशिष्ट स्त्रियों की सन्तान कामज रहेगी (७५-८५)।

आत्मज सन्तान की ही औरसता कही गई है (८६-८७)। यदि कोई धर्मपत्नी के सन्तान न हुई उसने पति की इच्छा से दत्तक पुत्र लिया और संयोगवश फिर सन्तान हो गई तो दत्तक पुत्र को ज्येष्ठ पुत्र के रूप में बराबर भाग मिलेगा। यदि दत्तकपुत्र और औरस पुत्र उपस्थित हो तो औरस पुत्र को ही पिता-माता के और्ध्वदेहिक कर्म करने का अधिकार है (८९-९८)।

ज्येष्ठ पत्नी का ही सम्पूर्ण गृह्य अग्नि एवं पाक यज्ञादि में अधिकार एवं नित्य, नैमित्तिक तथा काम्य सभी कर्मों में उसी की प्रधानता है (९९-१०४)। मुख्य गृह्याग्नि के कार्य धर्मपत्नी के अधीन हैं। अतः वह कार्यविशेष उपस्थित हुए विना कोई भी रूप में सीमोल्लङ्घन न करे अन्यथा गृह्य अग्नि लौकिक अग्नि हो जायगी और अग्नि की स्थापना फिर से करनी होगी (१०५-१०९)। किसी छोटी नदी को भी यदि मोह से पार कर लिया तो फिर नई प्रतिष्ठा अग्नि सन्धान के लिये करनी होगी (११०-११४)।

यदि ज्येष्ठ पत्नी कारण विशेष से उपस्थित न हो सके बाहर गई हुई हो तो द्वितीयादि अग्नि से श्राद्धादि विधि सम्पादित हो सकती है, परन्तु उसमें कोई भी विधि समन्त्रक नहीं हो सकती सभी अमन्त्रक करनी चाहिये (११५-१२९)। पूर्व पत्नी के न रहने से गृह्याग्नि की स्थापना के लिये जब दूसरा विवाह किया जाय तो पहले के घड़े से नूतन विवाहित स्त्री के घट में अग्नि की स्थापना की जाय (१३०-१३५)। अग्नि उसी समय भ्रष्ट हो जाती है, जब पत्नी चरित्र से दूषित हो (१३६-१४०)।

से अपुत्रा विधवा स्त्री दत्तक ले (२४३-२४४)। जो निकट सम्बन्धी दो या दो से अधिक सन्तानवाला हो उसका कोई-सा भी पुत्र अपने लिये दत्तक लिया जा सकता है (२४६)। यदि कोई-सा भी लूला, लङ्गड़ा, गूंगा, बहरा, अन्धा, काना, नपुंसक या कुष्ठ का दागी हो तो उसे लेना न लेना बराबर है (२४७)। यदि ऐसे विकलाङ्ग दत्तक लिये गये तो मन्त्र क्रिया आदि का लोप हो जाता है (२४८-२५२)। यदि समाज के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति एवं परिवार के भाई-बन्धु जिसके लिये आज्ञा दें तो वह दत्तक सफल होता है (२५३-२५७)।

अपुत्रक का दत्तक लेना दौहित्र न उत्पन्न हो तब तक प्रामाणिक है बाद में यदि दौहित्र पैदा हो जाय तो वह अप्रामाणिक है।

मनु ने दौहित्रों में बड़े छोटे में किसी एक को लेने का विधान बताया है (२५८-२६३)। हां, ३ या ५, ६ पुत्रों में सबसे ज्येष्ठ और सबसे कनिष्ठ को छोड़ किसी एक को लिया जा सकता है (२६४-२६६)। यदि मोह से ज्येष्ठ को दत्तक ले लिया गया तो मौञ्जी विवाह विधि के बाद वह अपने सगे पिता का ही पुत्र होने का अधिकारी है दूसरे का नहीं (२६७)। ऐसा दत्तक

॥ लोहितस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

नारायणस्मृति के प्रधान विषय

॥ श्री नारायणस्मृति की संक्षिप्त विषय-सूची समाप्त ॥

शाण्डिल्यस्मृति के प्रधान विषय

॥ शाण्डिल्यस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

कण्वस्मृति के प्रधान विषय

॥ कण्वस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

दाल्भ्यस्मृति के प्रधान विषय

॥ दाल्भ्यस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

आङ्गिरसस्मृति के प्रधान विषय

॥ आङ्गिरसस्मृति के पूर्वाङ्गिरसम् की विषय-सूची समाप्त ॥

आङ्गिरस (२)

उत्तराङ्गिरसम्

भारद्वाजस्मृति के प्रधान विषय

॥ भारद्वाजस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

स्मृति - सन्दर्भः

श्रीमन्महर्षि मार्कण्डेयलौगाक्षिप्रणीतो धर्मशास्त्रसंग्रहो

मार्कण्डेयलौगाक्षिस्मृतिद्वयात्मकः

षष्ठोभागः

NAG
PUBLISHERS

नाग प्रकाशक

११ ए/यू. ए., जवाहर नगर, दिल्ली-७

श्रीगणेशाय नमः

स्मृतिसन्दर्भस्य षष्ठभागस्य सूचीपत्रम्

मार्कण्डेयस्मृतेः प्रधानविषयाः — पृष्ठाङ्काः

लौगाक्षिस्मृतेः प्रधानविषयाः

॥ समाप्तमिदं सूचीपत्रम् । शमस्तु ॥

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

३७०

स्पन्दकारिका

भट्टकल्लट-क्षेमराज-उत्पलाचार्य-रामकण्ठाचार्य-प्रणीता 'स्पन्दकारिकावृत्ति-'स्पन्दनिर्णय'-'स्पन्दप्रदीपिका'-'स्पन्दकारिकाविवृति'-निष्कर्षरूपा 'सरोजिनी' हिन्दीव्याख्यासहिता

व्याख्याकार

डॉ० श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द'

एम.ए., एम.एड., व्याकरणाचार्य,

पीएच्.डी., डी.लिट्.

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

भूमिका खण्ड
परिचय एवं पृष्ठभूमि

ग्रन्थ खण्ड
स्पन्दकारिका

तृतीय निष्यन्द—विभूतिस्पन्द निष्यन्द

—*—

आनन्दाश्रमसंस्कृतग्रन्थावलि

ग्रन्थाङ्कः १८

सौरपुराणं व्यासकृतम् ।

एतत्पुस्तकं लेले इत्युपाह्वैः काशीनाथशास्त्रिभिः
संशोधितम् ।
तच्च
बी० ए० इत्युपपदधारिभिः
विनायक गणेश आपटे
इत्येतैः
पुण्याख्यपत्तने
आनन्दाश्रममुद्रणालये
आयसाक्षरैर्मुद्रयित्वा
प्रकाशितम् ।

द्वितीयेयमङ्कनावृत्तिः ।
शालिवाहनशकाब्दाः १८४६
खिस्ताब्दाः १९२४

मूल्यं पञ्चाशत्पणाधिक रूपकचतुष्कम् (रु. ४-५०)

अथ सौरपुराणस्थविषयानुक्रमः ।

अध्यायः ३७—जालंधरवधः ।

अध्यायः ३८—शिवमहिमा । शिवविष्णू उद्दिश्य सूतशौनकसंवादः । प्रतर्दनोपाख्यानम् । प्रतर्दनक्षपणकसंवादः । प्रतर्दनस्य राज्यं त्यक्त्वा तपश्चरणम् । ब्रह्मप्रतर्दनसंवादः । प्रतर्दने महीं शासति वर्णाश्रमाचारवर्णनम् । गुर्विन्द्रसंवादः । प्रतर्दनप्रजानां सन्मार्गाच्चालनार्थं देवान्प्रति बृहस्पतेरुपायकथनम् । भुवं गत्वा विष्णोः किंकरः शिव इति त्वया वक्तव्यमित्यादिः । किंनरं प्रति शचीपतेरादेशः । शिवविष्णू उद्दिश्य प्रतर्दनवैष्णवाभाससंवादः ।

अध्यायः ३९—कलिप्रवेशः । संप्राप्ते कलौ प्रतर्दनपालितप्रजावस्थावर्णनम् । शिवमुद्दिश्य लक्ष्मीनाराणसंवादः । तयोः कैलासं प्रति प्रस्थानम् । प्रतर्दनचरितमुद्दिश्य शिवसुरसंवादः । मध्वाचार्यमधिकृत्य ब्रह्मणो भविष्यकथनम् ।

अध्यायः ४०—श्रीमहेशस्य विष्णोश्च कथं तुल्यत्वमित्यादिः शौनकादीनामृषीणां सूतं प्रति प्रश्नः । तमुद्दिश्य तेषां सूतेन सह संवादः । रतिवसन्तादिसंवादः । कंदर्पनाशमधिकृत्य ब्रह्ममोहादिसंवादः । कलिमोहादिसंवादः । मधुमुद्दिश्य सूतस्य भविष्यकथनम् मध्वाचार्यस्य गुरुं प्रति स्वोत्पत्त्यादिकथनम् । अन्यता तत्र सिद्धान्ते पूर्वपक्षे च पाटवमित्यादिर्मधुं प्रति गुरोः शापः । कलिमाहिमवर्णनम् । रते मा कुरु संतापमहं मोहः कलेः सखेत्यादि मोहादिभी रतेः समाश्वासनम् ।

अध्यायः ४१—विष्णोः सुदर्शनाख्यचक्रप्राप्तिमुद्दिश्य सूतशौनकादिसंवादः । विष्णोस्त्वरिताख्यरुद्रलिङ्गप्रतिष्ठापनम् । विष्णुप्रोक्तशिवसहस्रनामस्तोत्रम् । दैत्यनिषूदनार्थं श्रीमहेशाद्विष्णोः सुदर्शनप्राप्तिः । भक्तिर्मयि दृढा विष्णो भविष्यति तवानघ । अजेयस्त्रिषु लोकेषु मत्प्रसादाद्भविष्यसीति विष्णवे शंभोर्वरप्रदानम् । विष्णुसमुदीरितशिवसहस्रनामस्तोत्रपठनादिमहिमा ।

अध्यायः ४२—शिवपूजाविधिः ।

अध्यायः ४३—उमामहेश्वरव्रतम् । दूर्वागणपतिव्रतम् ।

अध्यायः ४४—शिवालयकरणफलम् । शिवालये कृतस्य कर्मणः फलम् । शिवालयसंमार्जनादिफलम् । जलादिस्नानफलम् । वर्णमण्डलपूजनादिप्रकारः । अहिंसाफलम् । शिवभक्तिफलम् । रुद्रपूजनमहिमा ।

अध्यायः ४५—महेश्वरं दिदृक्षूणां ब्रह्मादिदेवानां मन्दरं प्रति प्रया-

णम् । महेश्वरसुरसंवादः । शिवस्तुतिः । पाशुपतव्रतम् । पाशुपतव्रतमाहात्म्यम् । भस्मधारणफलम् ।

अध्यायः४६——शिवमाहात्म्यम् ।

अध्यायः४७——अरुन्धतीसावित्रीसंवादः । शिवायतनसंमार्जनफलम् । शिवपूजामाहात्म्यम् । कथं वैश्रवणः पूर्वं समाराध्य महेश्वरम् । लब्धं तस्मात्कुबेरत्वं सूत तद्वक्तुमर्हसीति शौनकादीनां सूतं प्रति प्रश्नः । सूतस्य तान्प्रति वैश्रवणस्य पूर्वजन्मप्रभृति कुबेरत्वप्राप्तिपर्यन्तमशेषचरित्रकथनम् । कुबेरकृतशिवस्तोत्रम् । कुबेरस्य महेश्वराद्वरत्रयप्राप्तिः । शिवपूजनादिमहिमा । कुबेरकृतशिवस्तोत्रमाहिमा ।

अध्यायः४८——शिवमाहात्म्यम् । शिवधर्ममहिमा । शिवार्चनादिफलम् । नरवर्मणो राज्ञो महिष्याः सुदेव्या उपाख्यानम् । शिवदर्शनादिमाहिमा ।

अध्यायः४९——धर्मसंस्थापनार्थाय पार्वत्या अवतारः । रक्तासुरविक्रमवर्णनम् । तस्य मन्त्रिनामानि । अहमेव भवतां पूज्य इत्यादिर्दानवान्प्रति रक्तासुरस्योक्तिः । लोकस्य धर्महानिः । असुराभिभूतेन्द्रस्य बृहस्पतिसमीपं गत्वा स्वावस्थानकथनम् । न कालो विग्रहस्याद्येत्यादिर्मघवन्तं प्रति बृहस्पतेरुपदेशः । पुरोधोवचनमाकर्ण्य देवेन्द्रस्य अभिभूतो भृशं दैत्यैर्नाहं जीवितुमुत्सहे इत्यादिस्तं प्रति पुनरुक्तिः । मा विषादं कृथाः शक्र शरणं व्रज पार्वतीमित्यादि ब्रह्मणो देवेन्द्रं प्रत्युपायकथनम् । त्रिदशैः सार्धं शक्रस्य हिमवन्तं गिरिं प्रति प्रस्थानम् । पार्वत्यसुरयुद्धवर्णनम् । रक्तासुरवधः । शत्रुवधानन्तरं मघवते देव्या जगदैश्वर्यप्रदानम् ।

अध्यायः५०——प्राप्तराज्यं सुराधिपं द्रष्टुमाङ्गिरआदिमुनीनामागमनम् । कथमाराध्यते देवी वरदाऽचलकन्यकेत्यादिर्देवेन्द्रस्य मुनीन्प्रति प्रश्नः । भवानीपूजनमहिमा । उल्कानवमीव्रतम् । गिरिजार्चनमाहात्म्यम् ।

अध्यायः५१——तिथिनिर्णयः । अर्कसंक्रान्त्यादिपर्वपुण्यकालादिनिर्णयः । युगादयः । मन्वन्तरादयः ।

अध्यायः५२——प्रायश्चित्तविधिः ।

अध्यायः५३——भानुमनुसंवादः । शिवस्मरणमाहिमा । तारकासुरोपाख्यानम् । तारकभयाभिभूतानां देवानां ब्रह्माणं प्रति रक्षणार्थं गमनम् । ब्रह्मणस्तारकाय वरप्रदानम् । ब्रह्मसुरसंवादः । इन्द्रकामसंवादः । मदनदहनम् ।

अध्यायः५४—वरप्राप्त्यर्थं पार्वतीकृतमहादेवस्तुतिः। भवत्वनङ्गो मदनस्त्वत्प्रियार्थमित्यादि महादेवस्य पार्वत्यै वरप्रदानम्।

अध्यायः५५—पित्रे हिमालयाय पार्वत्या माहेश्वरज्ञानकथनम्।

अध्यायः५६—पार्वतीपरमेश्वरविवाहमण्डपकरणमुद्दिश्य पर्वतेश्वरविश्वकर्मसंवादः। विवाहमण्डपवर्णनम्।

अध्यायः५७—ईश्वरविवाहार्थं कालाग्न्याद्यावाहनम्। हरसंस्थानं प्रति कालाग्न्यादिप्रवेशः। शिवरूपवर्णनम्। शैलादेर्महेश्वराय देवासुरप्रवेशकथनम्। सिन्ध्वादिनदीप्रवेशकथनम्।

अध्यायः५८—उमाप्रदानार्थं हिमवतो मन्दरं प्रति गमनम्। शिवहिमवत्संवादः। पार्वतीप्रदानम्। विवाहवर्णनम्।

अध्यायः५९—मार्गभूषावर्णनम्। साम्बप्रत्युद्गमनार्थमागतानामप्सरआदिदिव्यस्त्रीणां वर्णनम्। शंकरात्पार्वत्या भूषणप्राप्तिः। क्रीडास्थानवर्णनम्। पार्वतीमुद्दिश्येश्वरहिमवत्संवादः। ब्रह्मशुक्रस्खलनम्। वालखिल्योत्पत्तिः। वालखिल्यरूपादिवर्णनम्। ब्रह्मादिदेवानां महेश्वराद्वरप्राप्तिः। शिवपार्वतीविवाहश्रवणादिफलम्।

अध्यायः६०—रुद्रगणरूपवर्णनम्। ईश्वरचिरक्रीडोद्भूतोत्पातवर्णनम्। उत्पातानुद्दिश्य नारददेवेन्द्रसंवादः। उत्पातकारणम्। शंकरक्रीडामधिकृत्य विष्णुसुरसंवादः। प्रवेशायोग्यकालः। विष्ण्वग्निसंवादः।

अध्यायः६१—अग्निस्तुतिः। अग्नेः शंभुगृहं प्रति गमनम्। नन्दिरूपवर्णनम्। हरं कथं पश्यामीत्याद्यग्नेश्चिन्ता। हंसरूपधारिणोऽग्नेर्महादेवक्रीडास्थाने प्रवेशः। पार्वतीवाहनवर्णनम्। सिंहस्य हुंकारेण ज्वलनस्य बधिरत्वम्। तस्यैव शंभुगृहान्निर्गमनम्। तं कृतकार्यं मन्यमानानां देवानां तेन सह संभाषणम्। गतोऽहं तस्य भवनं देवदेवस्य शूलिन इत्याद्यग्नेर्देवान्प्रति यथावत्स्ववृत्तान्तकथनम्। मुनिगणैः सार्धं देवानां मन्दरं प्रति प्रयाणम्। शिवस्तुतिः। वह्नेः शिवतेजोग्रहणम्। स्कन्दमुद्दिश्य शिवपार्वतीसंवादः।

अध्यायः६२—देवानां सगर्भत्वम्। गर्भमुद्दिश्य शंकरसुरसंवादः। शर्वतेजोमहिमवर्णनम्। कुमारोत्पत्तिः। तमुद्दिश्य शिवपार्वतीसंवादः। तस्य क्रीडनम्। षडाननाशमधिकृत्य देवेन्द्रभूतसंवादः। कथमुक्तमिदं भूता बालस्य हननं प्रतीत्यादिः पुरंदरस्य भूतान्प्रत्युक्तिः। आतुरादिनिषूदनपातकम्। गर्भो द्विवे-

यथा(दा) शक्र संरम्भात्सूदितस्त्वया । तदा नीतिर्गता कुत्रेत्यादिरिन्द्रं प्रति भूतानां प्रत्युक्तिः । स्कन्दवधार्थमिन्द्रप्रस्थानम् ।

अध्यायः६३—नारदमहेन्द्रसंवादः । स्कन्दवर्णनम् । स्कन्दमहेन्द्रयुद्धवर्णनम् । गुर्विन्द्रसंवादः । प्रसीद मे त्वं शरणागतस्येत्यादिर्महेन्द्रस्य स्कन्दं प्रत्युक्तिः । स्कन्दमहेन्द्रसंवादः । गुहस्य सेनापत्यप्राप्तिः । तारकासुरवधः ।

अध्यायः६४—शंकरभक्तियोगमाहात्म्यम् । शिवभक्तिमहिमा । लिङ्गार्चनमहिमा । सत्यध्वजसुतवसुश्रुतोपाख्यानम् । वसुश्रुतमुद्दिश्य यमतत्किंकरसंवादः । शिवभक्तमाहात्म्यम् ।

अध्यायः६५—पञ्चाक्षरमन्त्रमहिमा । बिल्ववृक्षमहिमा । शिवार्चनफलम् । नानाविधपुष्पकृतशिवपूजाफलम् । शिवप्रियपुष्पतारतम्यम् । निषिद्धपुष्पाणि । बिल्वपत्रादिभिः कृतस्य शिवार्चनस्य माहात्म्यम् । शिवालयमण्डनफलम् । पुष्पादिकृतपूजाफलम् । कूपारामादिबन्धनफलम । शिवक्षेत्रादिमानम् ।

अध्यायः६६—शिवप्रीतिफलम् । शिवभजनफलम् । शिवस्मरणफलम् । शिवनिर्माल्यधारणमहिमा । शिवनिर्माल्यलङ्घनपातकम् । लिङ्गव्याख्यानम् । ज्येष्ठत्वार्थं ब्रह्मविष्णुविवादः । तद्दर्पहरणाय लिङ्गप्रादुर्भावः । ज्येष्ठत्वं युवयोस्तावदास्तामित्यादिर्विष्णुब्रह्माणौ प्रति महादेवस्योक्तिः । मत्प्रसादेन सर्वस्मादधिको भव माधवेति विष्णवे महादेवस्य वरप्रदानम् । चराचरस्य जगतो मान्यो भव पितामहेति शंकरस्य ब्रह्मणे वरप्रदानम् । ब्रह्मनारदसंवादः । समुद्रदर्शनादिमहिमा । सप्तकोटीश्वरलिङ्गमाहात्म्यम् ।

अध्यायः ६७—उज्जयिनीस्थमहाकाललिङ्गमाहात्म्यम् । कुक्कुटेश्वरोत्पत्तिः । शूलेश्वरमाहात्म्यम् । ओंकारेश्वरमाहात्म्यम् । अगस्त्येश्वरप्रादुर्भावः । शक्तिभेदाख्यलिङ्गमहिमा । स्थाणुलिङ्गमहिमा । प्रयागमाहात्म्यम् । गयातीर्थमाहात्म्यम् ।

अध्यायः ६८—तिथिनिर्णयः । सोमसूत्रप्रदक्षिणा । मन्त्रवीर्यहरपदार्थाः । गुरुशब्दव्युत्पत्तिः । गुरुत्यागादिदोषः । श्राद्धकर्तृनिर्णयः । साग्निकनिरग्निकव्याख्यानम् । एकहस्तकृतप्राणामादिदोषकथनम् । अक्षारगणकथनम् । परभक्षककथनम् ।

अध्यायः ६९—श्वेतोपाख्यानम् । शंभोः कालकालाख्याप्राप्तिः । ज्वालेश्वरादिलिङ्गमाहात्म्यम् । मुनिपत्नीमोहनमुद्दिश्य ब्रह्मनारदसंवादः । सौरपुराणश्रवणादिमहिमा ।

विषयसूची

।। श्रीः ।।

विद्याभवन प्राच्यविद्या ग्रन्थमाला
१५५

स्वच्छन्दतन्त्रम्

(प्रथमो भागः)

(१-६ पटलानि)

श्रीमहामाहेश्वराचार्यवर्यश्रीक्षेमराजविरचित**स्वच्छन्दोद्योताख्य**-
व्याख्यानेन**ज्ञानवती**हिन्दीभाष्येण च विभूषितम्

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी

व्याकरणाचार्यः
एम० ए० (संस्कृत), पी-एच्०डी०, लब्धस्वर्णपदकः
शास्त्रचूडामणि विद्वान्
संस्कृतविभागः, कलासङ्कायः,
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी

चौखम्बा विद्याभवन

वाराणसी

संक्षिप्त-परिचय

प्रथम पटल

इस पटल का शीर्षक 'मन्त्रोद्धारप्रकाशन' है । मुद्रापीठ, मण्डलपीठ, मन्त्रपीठ और विद्यापीठ वाले चतुष्पीठात्मक इस स्वच्छन्दतन्त्र में मन्त्र पीठों के विषय में कहा गया है—

'स्वच्छन्दभैरवश्चण्डः क्रोध उन्मत्तभैरवः।
ग्रन्थान्तराणि चत्वारि मन्त्रपीठं वरानने ॥' (स्व०तं०टी० १।१)

अर्थात् मन्त्रपीठ चार हैं—स्वच्छन्द भैरव, चण्ड भैरव, क्रोध भैरव और उन्मत्त भैरव । पटल के प्रारम्भ में उत्तम गुरु और उत्तम शिष्य के लक्षणों का वर्णन करने के साथ-साथ दुष्ट आचार्य और अयोग्य शिष्य की चर्चा की गयी है । अकार से लेकर क्षकार तक के पचास वर्णों को मातृका कहा जाता है । इनमें 'अ' से लेकर 'अः' तक सोलह स्वरों को 'भैरव' या 'बीज' तथा 'क' से लेकर 'क्ष' तक चौंतीस व्यञ्जनों को 'भैरवी' या 'योनि' कहा गया है । इनके द्वारा इनकी सात मातृका देवियों की पूजा करनी चाहिये । अघोरेश की पूजा अघोरमन्त्र के द्वारा की जानी चाहिये । यह पूजा अघोर के स्थूल रूप की होती है । विद्याङ्गों का वर्णन करते हुए इच्छा ज्ञान क्रिया नामक शक्तित्रय के मन्त्रों की चर्चा की गयी है । भैरव मन्त्र के साथ भैरवी के अङ्गवक्त्रों तथा भैरवाष्टक एवं लोकपालाष्टक के मन्त्रों के वर्णन के साथ प्रथमपटल का उपसंहार हुआ है ।

द्वितीय पटल

द्वितीय पटल का नाम 'अर्चाधिकार' पटल है शीर्षक के द्वारा ही इस पटल के विषय का सङ्केत मिलता है । इसमें शौच, प्राणायाम, अभिषेक, संध्या, भस्मस्नान आदि करने के बाद यागगृहप्रवेश, विघ्नप्रोच्चाटन, द्वारदेवता-पूजन, पुनः यागगृहप्रवेश, ब्राह्मणपूजन, न्यास करने का विधान बतलाया गया है । देहशुद्धि के लिये प्राणायाम, न्यासविधि के द्वारा इष्टदेवता का आवाहन, हृदययाग या आन्तर पूजा की चर्चा की गयी है । तत्पश्चात् आसन, न्यास, विद्यापद्म की दिशाओं में वामा ज्येष्ठा रौद्री आदि शक्तियों का तथा मध्य में मनोन्मनी नामक शक्ति के न्यास और ध्यान का उल्लेख है ।

सूर्य सोम और अग्नि के मण्डल तथा उनके अधिष्ठातृ ब्रह्मा, विष्णु और शिव के न्यास ध्यान के बाद मध्य में महाप्रेत भगवान् भैरव के स्थूलरूप का न्यास करे । आसन गन्ध आदि से उनकी पूजा के पश्चात् भगवान् के निष्कल स्वरूप का ध्यान आवाहन आदि करना चाहिये । इनके पूजन के बाद

अन्तर्याग का अनुष्ठान करना चाहिये । आवरण न्यास, वक्त्र न्यास के वर्णन के पश्चात् अघोरेशी, आठ भैरव, आठ लोकपाल का ध्यान करने की चर्चा की गयी है । ततः नाडीसन्धान, नैवेद्य, अर्घप्रदान, मुद्रानिवेदन आदि विषय वर्णित हैं । साथ ही अक्षमाला, जप का स्वरूप और जप का भेद भी बतलाया गया है ।

पूजन का वर्णन करने के बाद याग का वर्णन है । शक्तिन्यास, आठ श्मशानाधिपति का वर्णन कर उनके पूजन नमन की चर्चा, कुण्डसंस्कार, वागीशीपूजन, योनिमुद्राप्रदर्शन, अग्निजनन, अग्निस्थापन, उसका पूजन, अग्नि का गर्भाधान आदि संस्कार, उसकी अङ्गकल्पना, जातकर्म, सूतकशुद्धि, वक्त्र-शोधन आदि करने के बाद, वह्नि की रक्षा के लिये तत्तद् दिशाओं में देवता-न्यास करना चाहिये । इसके बाद शिवाग्नि का नामकरण, आज्यसंस्कार, वक्त्रसंस्कार, विविध काम्य होमों का वर्णन है । अग्नि के चूड़ाकरण आदि अवशिष्ट संस्कारों के लिये पूर्णाहुति देने के बाद यजन करना चाहिये । आगे चलकर भैरव की पूजा, नित्यहोम का वर्णन करने के बाद भिन्न-भिन्न उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये भिन्न-भिन्न द्रव्यों, मुद्राओं एवं आहुतिपरिमाण की चर्चा के साथ इस पटल का उपसंहार किया गया है ।

तृतीय पटल

इस पटल का नाम 'अधिवास' पटल है । गुरु शुद्ध, सुष्ठु अलङ्कृत होकर द्वारदेवताओं की पूजा कर यागगृह में प्रवेश करे । वहाँ रक्षाविधान के बाद, अन्तर्याग करना चाहिये । इस याग को करने के बाद ही द्रव्ययाग करना चाहिये—

अकृत्वा मानसं यागं योऽन्ययागं समारभेत् ।
अशिवः स तु विज्ञेयो न मोक्षाय विधीयते ॥

अर्थात् मानसयाग न करने पर वह बाह्ययाग व्यर्थ हो जाता है । तत्पश्चात् भैरवमूर्त्ति का न्यास, उसका पूजन, अमृतीकरण, अर्घपात्रप्रकल्पन, शिवहस्त-विधि, मन्त्रसन्धान, नाडीसन्धान को क्रमश करने की आज्ञा दी गयी है । इसके बाद यागभूमि का शोधन, उसका मार्जन, लेपन, विकिरा का प्रयोग, शिवकुम्भ की परिकल्पना करनी चाहिये । कुम्भ में कलाओं अध्वाओं और भैरवों की स्थापना एवं प्राणप्रतिष्ठा करने के बाद उसका अर्चन और साथ ही बार्धानी की स्थापना और पूजा करनी चाहिये । इस अनुष्ठान के बाद इन्द्र आदि लोकपालों की पूजा, मण्डलनिर्माण, गुरु एवं गणेश की पूजा करनी चाहिये । उनकी आज्ञा से योगपीठ की रचना, इसमें मन्त्रसन्धान, नाड़ी-सन्धान, परमीकरण, नैवेद्यदान, मुद्राप्रदर्शन करने के बाद क्षेत्रपालबलि देनी

चाहिये । तत्पश्चात् आचार्य स्नान कर भस्मधारण एवं आचमन कर अग्निकुण्ड के पास जाकर भैरवपूजन, हवन चरुपाक, स्थाली में भैरव की स्थापना, पूजा, और चरुपाक करे । चरु का हवन, सम्पात होम, देवताओं के लिये होम कर भगवान् भैरव से शिष्य की अधिवासदीक्षा के लिये प्रार्थना होम करे ।

इसके लिये यज्ञमण्डप के द्वार पर मण्डल बना कर उसके ऊपर कुश का आसन रख कर शिष्य को उस पर बैठाये । पुन: उस शिष्य का संस्कार कर उसकी आँख पर पट्टी बाँधे और हाथ में पुष्प दे । शिष्य मन्त्र का उच्चारण करता हुआ पुष्पों को विखेर दे । फिर आचार्य शिष्य का हाथ पकड़ कर यवनिका के अन्दर स्थापित भैरव के सामने ले जाय और शिष्य के द्वारा पुष्प अर्पित कराने के बाद उसका मुख खोल कर सदाशिवसहित भैरव का दर्शन कराये । पुन: यहाँ मण्डल बना कर शिष्य को उसमें बैठा कर आचार्य उसके अशुद्ध देह को भस्म कर यौगिक विधि से उसमें मन्त्र, कला आदि की स्थापना के द्वारा उसको दिव्य देह प्रदान करे । तत्पश्चात् शिष्य के शिर पर शिवहस्त रख कर आचार्य उसे कुण्ड के समीप ले जाकर मण्डल पर बैठाये। फिर शिष्य के हाथ में कुश दे कर नाड़ीसन्धान करे । शिवहस्त में भैरव का ध्यान कर शिष्य का शिवहस्त से आलभन अर्थात् स्पर्श करे । सम्पातहोम मन्त्रदीप पाशच्छेदन आदि क्रियाओं को सम्पन्न करने के बाद आचार्य शिष्य के हाथ में पुष्प देकर स्थण्डिल शिवकुम्भ शिवाग्नि का पूजन तथा दण्डवत् प्रणिपात कराये । पुन: पञ्चगव्यप्रदान के बाद आचार्य अनुष्ठान में न्यूनाधिक्यदोष के परिहार के लिये प्रायश्चित्त होम करे ।

विशेषपूजन, अर्घदान, मुद्राबन्ध, स्तुतिपाठ, वाद्य, चरुभोजन करने के बाद देवता का विसर्जन करना चाहिये । शिवकुम्भ पर से माला हटाकर कलश का पूजन फिर गोमय का स्पर्श करे । शिवकुम्भ से प्रोक्षण करने के बाद शिष्य के लिये शय्या की व्यवस्था करे । शय्या पर स्थित शिष्य का शिखाबन्धन तथा रक्षा कर उसे सुला दे और आचार्य स्वयं मण्डप के बाहर जाकर बलिकर्म करे । बाद में पञ्चगव्य पान कर या तो शिष्यों के साथ सो जाय या जागरण करते हुए भैरव का ध्यान करे । इस प्रकार गुरु और शिष्य का यागमण्डप में अधिवास का अनुष्ठान पूर्ण होता है ।

चतुर्थ पटल

चतुर्थ पटल का नाम 'दीक्षा-अभिषेक' पटल है । इसमें कलादीक्षा की साङ्गोपाङ्ग चर्चा विहित है । रात्रि बीतने पर आचार्य शौच आदि करने के बाद सकलीकरण कर यागमण्डप में प्रवेश करे । शिष्य भी हाथ में पुष्प लेकर आचार्य के सम्मुख उपस्थित हो रात्रि में दृष्ट स्वप्नों का वर्णन करे ।

मदिरापान विष्ठा आदि का लेपन, दही भात खाना आदि, सूर्योदय, समुद्रनदी आदि कासं तरण आदि देखना शुभ स्वप्न होते हैं । तैलाभ्यङ्ग, तैलपान, दाँत एवं केश का गिरना विवाह देखना आदि अशुभ स्वप्न माने गये हैं । अशुभ स्वप्नों को देखने के बाद तत्संसूचित दुष्टफल की शान्ति के लिये होम करना चाहिये । तत्पश्चात् सकलीकरण, विघ्नोच्चाटन, शिवकुम्भस्थापन शिव-हस्त, लोकपालपूजा आदि करने के बाद साधक शिव का विसर्जन करे । इसके बाद नित्य नैमित्तिक कर्म करे । यहाँ भी मण्डलनिर्माण आदि पूर्व की भाँति करना होता है । नैमित्तिक कर्म में भी सकलीकरण आदि अनुष्ठान करना पड़ता है । तत्पश्चात् मण्डल का संस्कार कर आचार्य उसमें प्रवेश कर गुरु तथा अनन्त आदि का पूजन करे । बाद में नाड़ीसन्धान, तर्पण, पूर्णाहुति आदि कर आचार्य शिष्य के देह में सकलीकरण, आसन, मण्डलकल्पना, मन्त्रसन्धान, शिवहस्तक्रिया का सम्पादन करे । तत्पश्चात् आचार्य शिष्य का नामकरण कर प्रणिपात प्रदक्षिणा आदि के पश्चात् हवन कराये । इसके बाद शिष्य की आँख को वस्त्राच्छादित कर उसके हाथ में पुष्प देकर मण्डल में प्रवेश करे । फिर अग्निकुण्ड के समीप शिष्य का नाडीसन्धान, पूर्णाहुति प्रायश्चित्त होम आदि करे । इस प्रकार शिष्य की बीजशुद्धि होती है । इसके पश्चात् होम आदि के द्वारा शिष्य का रुद्रांशापादन करे । इस प्रकार शिष्य की समयी नामक पहली दीक्षा सम्पन्न होती है ।

दीक्षा के सन्दर्भ में अध्वशुद्धि के लिये सूक्ष्म विधान करना चाहिये । यह दीक्षा पुत्रक और साधक भेद से दो प्रकार की होती है । शिष्य भी दो प्रकार के होते हैं—भोगेच्छु ओर मोक्षेच्छु । इसको लोकधर्मी और शिवधर्मी भी कहते हैं । शिवधर्मी या मुमुक्षु भी दो प्रकार का होता है निर्बीज और सबीज । बालक, मूर्ख, वृद्ध स्त्री, रोगी आदि की नियम आदि से रहित निर्बीज दीक्षा होती है । जो विद्वान् हैं और व्रतचर्या आदि का पालन करने में समर्थ हैं उनकी सबीज दीक्षा होती है । इन चार प्रकार की दीक्षाओं में से पहले पुत्रक दीक्षा विधान के सन्दर्भ में षडध्व शुद्धि पर प्रकाश डाला गया है । इसमें पाशशुद्धि के लिये अध्वसन्धि में होम, व्याप्यव्यापक भाव से अध्वा का अवलोकन, अध्वन्यास, वागीश्वरी का सन्निधापन उसका पूजन, निष्कृतिहोम, वागीशीजन्म, उसके ४८ संस्कार, उसका रुद्रांशापादन, जीव का भोग से विश्लेष आदि विषयों को बतलाया गया है । शुद्ध चैतन्य का शिष्य देह में प्रवेश, उसका तत्स्थीकरण, वागीशीपूजन-विसर्जन करना चाहिये । शिवधर्मिणी दीक्षा को बतलाने के बाद लोकधर्मिणी दीक्षा, सबीज दीक्षा, सद्योनिर्वाणदा दीक्षा, निवृत्ति प्रतिष्ठा आदि कला का सन्धान, कलाव्याप्ति, वागीशीध्यान, अधिकार, भोग, लय, निष्कृति, पाशच्छेद, तर्पण, वागीशी विसर्जन, षडध्व रूपपाश का शोधन, क्षमापन, त्रितत्त्व की शुद्धि, शिष्य का शिखाच्छेदन,

होम, स्नान, शिवहस्त का पूजन प्रभृति का वर्णन कर आचार्य द्वारा योजनिका अनुष्ठान के लिये भगवान् से प्रार्थना करने की बात कही गयी है ।

योजनिका-कर्म हेतु पूर्व की भाँति पहले सकलीकरण आदि करे। तत्पश्चात् चारप्रमाण, प्राणसञ्चार, षडध्वविभाग, षडध्व की प्राण में स्थिति, मन्त्रैकादशिका एवं पदैकादशिका की प्राण में स्थिति तथा हंसोच्चार को बतलाते हुए व्यापिनी समना के त्याग के बाद उन्मना में प्रवेश कर शिवतत्त्व को प्राप्त करना चाहिये—यह कहा गया । उसके बाद हंसोच्चार, वर्णोच्चार, कारणत्याग कालत्याग, शून्यभावना, षट्शून्यत्याग, सप्तसामरस्य का ज्ञान, सभेदविषुवत्, पदार्थभेदन, हंसयोग तथा मात्रासंख्या की चर्चा की गयी है। तत्पश्चात् शरीर में हंसमात्रा का परिमाण, मात्रा की संख्या, मात्रा का योग, कारणलक्षण, ग्रन्थिभेदन, आत्मव्याप्ति, शिवव्याप्ति और तत्त्वव्याप्ति का वर्णन किया गया है। इसके अन्त में आचार्य में शिवभावना तथा पूर्णाहुति को बतलाते हुए समनापर्यन्त पाशजाल की स्थिति कही गयी है । मानस व्यापार के ऊपर बोधरूप होने पर शिष्य शिव हो जाता है । यहाँ होम करना पड़ता है । इसके अनन्तर शिष्य शिवाग्नि आदि की प्रदक्षिणा कर कृतकृत्य हो जाता है । उसके अन्दर सर्वज्ञता आदि छः गुणों का आविर्भाव होने से वह शिव हो जाता है ।

निर्वाणदीक्षा दो प्रकार की होती है—सबीजा और निर्बीजा । सबीजदीक्षादीक्ष्य का अभिषेक होता है । इस सन्दर्भ में भैरवपूजन, कलापूजन आसन और मण्डल की कल्पना आदि करने के बाद आचार्य शिष्य को नूतन वस्त्र पहना कर योगपीठ की रचना कर शिष्य को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने का अधिकार देता है कि 'आज से तुम शिव की आज्ञा से लोगों को दीक्षा देने के अधिकारी हो गये हो ।' साथ ही आचार्य स्वच्छन्दभैरव से शिष्य के अधिकार की योग्यता एवं सफलता के लिये प्रार्थना करता है । अभिषेक के बाद प्रणाम के अनन्तर शिष्य की सबीज दीक्षा पूर्ण होती है । इसी प्रकार भूतिदीक्षा विद्यादीक्षा की भी इस पटल में चर्चा की गयी है । दीक्षा के बाद आत्मयाग करने की बात कही गयी है । आत्मदीक्षा दो प्रकार की होती है—वैज्ञानिकी और प्राकृती । प्राकृती दीक्षा में पूजा होम आदि करना पड़ता है । वैज्ञानिकी उससे भिन्न है । इसमें समस्त कार्य सूक्ष्मरूप से सम्पादित किये जाते हैं । आत्मदीक्षा के बाद विशेष पूजन अर्घदान साष्टाङ्गप्रणाम के बाद विसर्जनविधि का वर्णन करते हुए क्षमापन बलिकर्म गुरुपूजा का वर्णन किया गया है । अन्त में यह बतलाया गया है कि शिवदीक्षादीक्षित व्यक्ति की पूर्वजाति नहीं रह जाती । पूर्व में चाहे वह किसी भी जाति का हो दीक्षासम्पन्न होने के बाद उसकी केवल भैरवीय जाति ही होती है । पूर्व जाति की चर्चा करने वाला चिरकाल तक नरकगामी और प्रायश्चित्ती होता है ।

पञ्चम पटल

इस पटल का शीर्षक 'तत्त्वादिदीक्षा' पटल है । इसमें छत्तीस मुख्य तत्त्वों का शोधन बतलाया गया है । विद्याराज के नववर्ण (= ह्, र्, क्ष्, म्, ल्, व्, य्, ऊ, म्) समस्त तत्त्वों के वाचक हैं । जैसे पृथिवी से लेकर प्रकृति तत्त्व तक का वाचक ऊकार है । 'म्' शक्ति का वाचक है । इसी 'म्' के द्वारा व्यापिनी समना का भी शोधन होता है । इसके बाद आत्मा को परतत्त्व उन्मना से जोड़ दिया जाता है । यह तत्त्वदीक्षा छत्तीस, नव, तीन और एक तत्त्व के शोधन की दृष्टि से चार प्रकार की होती है । तत्त्व दीक्षा के बाद पद दीक्षा की विधि बतलायी गयी है । इसमें नवनाभ मण्डल का उद्धार करना पड़ता है । नवनाभ मण्डल की रचना नवकमलों में होती है । यह नवनाभ पुर आठ द्वारों वाला होता है । इसके अनुष्ठान में सकलीकरण, पूजन आदि पूर्व की भाँति किया जाता है । भैरव का पूजन मण्डल के मध्य में होता है । उन तत्त्वों तथा तत्त्वाधिष्ठातृ देवताओं का न्यास करने के बाद सबको संहार क्रम से शिवतत्त्व में संयुक्त किया जाता है । शोधन अर्थात् तत्त्व दीक्षा के बाद आचार्य के द्वारा शिष्य को नियमों का ज्ञान कराया जाता है । इसमें किसी शास्त्र, धर्म आदि की निन्दा न करने, गुरु का अन्न न खाने आदि का उपदेश होता है. । समयश्रावण के पश्चात् विज्ञानदीक्षा की चर्चा की गयी है । इसमें पाँच उद्घात तथा उनके द्वारा शिष्याध्वा का शोधन अर्थात् पञ्चतत्त्व का शोधन करने के बाद एक उद्घात से शिष्यात्मा का परतत्त्व से संयोजन बतलाया गया है । इस क्रम में पृथिव्यादि चार तत्त्वों के शोधन के बाद अन्तिम एक उद्घात के द्वारा शून्य अर्थात् व्यापिनी का शोधन कर समना के बाद उन्मना में शिष्यात्मा का योजन होता है । यहाँ संयुक्त होने पर शिष्य परमशान्ति को प्राप्त करता है ।

यह सम्प्रदाय गुरुपरम्परा से प्राप्त होता है । (अत्यन्त खेद का विषय है कि वर्त्तमान समय में यह परम्परा उच्छिन्न हो गयी है) । वर्ण मन्त्र पद एवं कला तत्त्व भुवन इन छहों अध्वाओं के शोधन में ज्ञानदीक्षा का प्रयोग होता है। यह शोधन धारणा दीक्षा के नाम से जाना जाता है । इस सन्दर्भ में टीकाकार आचार्य क्षेमराज ने बौद्धों के मत का उपस्थापन कर उनका खण्डन एवं तान्त्रिक मत का मण्डन किया है । योगी को चाहिये कि वह इस धारणा दीक्षा का अभ्यास करे क्योंकि ऐसा करने से उसे परमशान्ति मिलती है ।

षष्ठ पटल

इस पटल को 'पञ्चप्रणवाधिकार' पटल की संज्ञा दी गयी है । समयी साधक को अनेक सिद्धियाँ मिलती हैं । प्रथमपटल में निर्दिष्ट बहुरूप मन्त्र को

पाँच प्रणवों से संयुक्त कर इस मन्त्र में जितने अक्षर (= बत्तीस अक्षर) हैं उतने लाख जप करना चाहिये। इसके लिये सब प्रकार से शुद्ध एकान्त गुफा उत्तम स्थान है। प्रणव को ह्रस्व दीर्घ प्लुत सूक्ष्म अतिसूक्ष्म भेद से पाँच प्रकार का बतलाया गया है। यह प्रणव 'हंस' से युक्त है। इस प्रणव का विस्तारपूर्वक वर्णन करने के समय षष्ठ स्वर (= ऊकार) पर विशेष दृष्टि डाली गयी है। ह्रस्व उकार एवं दीर्घ ऊकार को उस महाविमर्शात्मक परतत्त्व का गुण माना गया है। परतत्त्व (= शिव) के सकल या सगुण तथा निष्कल या निर्गुण दोनों रूप षष्ठस्वर से युक्त हैं। यह पञ्चप्रणव वाचक और वाच्य दो रूपों वाला है। अ उ म् बिन्दु और नाद ये वाचक पञ्च प्रणव हैं। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव ये वाच्य पञ्चप्रणव हैं। बहुरूप मन्त्र के जप और उसके दशांश हवन का अनुष्ठान करने से साधक को परतत्त्व का बोध हो जाता है और वह अहिकञ्चुकवत् संसार से मुक्त हो जाता है।

होम के लिये घटक द्रव्यों का वर्णन कर इस जप होम के फल का वर्णन किया गया है। वशीकरण के अनेक घटक द्रव्यों को बतलाने के साथ-साथ उच्चाटन विद्वेषण, सुभगीकरण मारण प्रयोगों को बतलाते हुए अन्त में शान्तिकर्म की भी चर्चा की गयी है।

सप्तम पटल

इस पटल का नाम 'कालाधिकार' पटल है। काल दो प्रकार का है— सौर और आध्यात्म। सौरकाल प्रसिद्ध है अत: उसका दक्षिणायन, उत्तरायण, पक्ष, मास, वेला नाम लेकर परिचय कराने के बाद इस पटल में आध्यात्म काल का विस्तृत वर्णन किया गया है। इस षाट्कोशिक शरीर में असंख्य नाड़ियाँ फैली हुई हैं जिनमें प्राणवायु सञ्चरण करता रहता है। इन नाडियों में इड़ा, पिङ्गला, सुषुम्ना, गान्धारी, हस्तिजिह्वा, पूषा, यशस्विनी, अलम्बुसा, कुहू और शंखिनी ये दश प्रधान नाड़ियाँ हैं। प्राणवायु भी अपने व्यापार की दृष्टि से दश प्रकार के हैं। प्रस्तुत पटल में इसको विस्तार से बताने के बाद क्षण, तुटि एवं याम आदि जो कि प्राणचार के आधार पर निश्चित होते हैं, का विवरण प्रस्तुत है। इसी में चन्द्र, सूर्य आदि नक्षत्र, ग्रह, राशियाँ तथा प्रात: सायं आदि काल की भी स्थिति बतलायी गयी है। यह बाह्यकाल शरीर के भिन्न-भिन्न अङ्गों में स्थित होता है। पक्ष, मास, वर्ष, दशाब्द, शताब्द यहाँ तक कि युगों की भी स्थिति योगी को प्राणचार में अनुभूत होती है। प्राणचार के सिद्ध हो जाने पर योगी जन्म-मृत्यु को जीत लेता है और अपने साथ-साथ दूसरे के जीवनकाल का भी ज्ञान उसे हो जाता है। इड़ा आदि तीन मुख्य नाडियों में प्राणचार की साधना के परिपक्व हो जाने पर वह ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, वामा, ज्येष्ठा, रौद्री आदि सबको जान लेता है। योगी

इस योग के बल से अपनी तथा दूसरे की मृत्यु, रोग, सम्पत्तिनाश तथा आदर सम्मान राज्यलाभ आदि का ज्ञान कर लेता तथा अशुभों पर विजय प्राप्त कर लेता है । आध्यात्मिक काल को जीतने वाला योगी नाना प्रकार की सिद्धियों को प्राप्त करने के साथ-साथ यदि परमतत्त्व के ध्यान में तत्पर रहता है तो हस्तगत मोक्ष प्राप्त कर लेता है ।

आगे चलकर यह बतलाया गया कि परतत्त्व का ज्ञान ही मोक्ष है । इसी क्रम में पञ्चपञ्चक का वर्णन किया गया है । अहङ्कार आदि अट्ठारह गुणों से युक्त उन्मना नामक परतत्त्व पञ्चपञ्चक में रहता है । ऐसा तत्त्वज्ञाता जीवन्मुक्त हो जाता है । उसके अन्दर सर्वज्ञता आदि छः गुण आ जाते हैं । वह कालजयी होकर स्वच्छन्दभैरव के समान हो जाता है । इसके बाद अयोगी के वे लक्षण बतलाये गये हैं जिनके प्रकट होने पर अयोगी की शीघ्र मृत्यु हो जाती है । साथ ही ऐसे अरिष्टों की शान्ति के उपाय भी बतलाये गये हैं । योगाभ्यास की विधि तथा उसका फल बतलाने के बाद नाग आदि दश वायुओं के कार्य बतलाये गये हैं । जो योगी इन वायुओं का निरोध कर लेता है, शरीर के तत्तत् संस्थानों में निरोध होने पर उस योगी के शरीर में तत्तत् लक्षण प्रकट होने लगते हैं । उन्मनापर्यन्त समस्त द्वारों का उद्घाटन करने के बाद योगी स्वच्छन्द के समान हो जाता है । उसके अन्दर परकायप्रवेश की क्षमता, क्षुत्तृषा का नाश, त्रैलोक्य का सार्वकालिक प्रत्यक्ष तथा सर्वज्ञता आदि गुण उत्पन्न हो जाते हैं ।

अष्टम पटल

अष्टम पटल को 'अंशकाधिकार' पटल कहा गया है । परबोधभैरव की ब्राह्मी आदि शक्तियों के द्वारा अल्पांशतया अवभासित ब्रह्मा आदि अंशक कहे जाते हैं । भावांश, स्वभावांश, पुष्पपातांश, मन्त्रांश तथा दो प्रकार का अंशकापादन ये छः प्रकार के अंशक होते हैं । देवानुस्मरण को भावांश, लिङ्गार्चन आदि व्यापार को स्वभावांश कहते हैं । यह ब्रह्मांश आदि नाम वाला होता है । वेदभक्त आदि को ब्रह्मांश आदि कहते हैं । पुष्पपातवश नामकरण को पुष्पपातांश एवं मन्त्राराधक को मन्त्रांश कहते हैं । नरमांस का होम करने वाला तथा वीरद्रव्य के प्रयोग के अयोग्य व्यक्ति ये दोनों अंशकापादन हैं । मन्त्रांशक हीन मध्यम सिद्ध और सुसिद्ध चार प्रकार के होते हैं । इनकी साधनाविधि बतलाने के बाद यह कहा गया कि मन्त्रों के वर्णों में चैतन्य का आविर्भाव होने पर वे भोग और मोक्ष दोनों के प्रदाता बन जाते हैं । इसके बाद मन्त्रावतार का क्रम बतलाया गया है । इसके बाद तन्त्रावतार का क्रम बतलाते हुए कहा गया कि परम कारण शिव से यह तन्त्र मनुष्य तक अवतीर्ण हुआ । परमशिव से सदाशिव उनसे ईश्वर ईश्वर से विद्येश्वर उनसे

श्रीकण्ठ उनसे देवताओं, ऋषियों तथा देवताओं से और फिर मनुष्यों के बीच यह तन्त्र प्रचलित हुआ । अन्त में परमेश्वर पार्वती को कहते हैं कि तुम भी इस गुप्ततन्त्र को ऋषियों और मनुष्यों में वितरित करो ।

नवम पटल

इस पटल को 'कोटराक्षाद्याधिकार' पटल कहा जा सकता है । भगवान् स्वच्छन्दभैरव के हृदय से एक तेजोमय रूप प्रकट हुआ जो भिन्नाञ्जन के समूह जैसा कृष्णवर्ण का तथा नाना अलङ्कारों से अलङ्कृत था । उनका नाम कोटराक्ष हुआ । इनकी आराधना का मन्त्र भी स्वच्छन्दमन्त्र ही है । क्योंकि वे स्वच्छन्दभैरव स्वरूप हैं । शुद्धभूमि में विशिष्ट मण्डल बनाकर साधक कोटराक्ष की मूर्त्ति की स्थापना कर अर्घ आदि से उनका पूजन करे । भैरवमन्त्र के बत्तीस अक्षरों के द्वारा कमल पर अरुणा आदि बत्तीस देवियों का आवाहन पूजन आदि करना चाहिये । तत्पश्चात् दश दिक्पालों के पूजन का विधान है। ध्यान और पूजन के बाद जप के योग्य महेन्द्र मलय आदि आठ पर्वतों एवं अन्य क्षेत्रों का वर्णन किया गया है । मन्त्र के सिद्ध होने पर साधक कालाग्नि भुवन से लेकर सदाशिव पर्यन्त समस्त लोकों को वश में कर लेता है । यह बत्तीस देवताचक्र परिवार के साथ कोटराक्ष की उपासना है ।

उक्त परिवार से रहित एकवीर उपासना भी पूर्वोक्त विधि से की जाती है । साधक इस उपासना से यथेच्छ फल प्राप्त करता है । इसके बाद इस पटल में रक्षाविधान का वर्णन है । इसमें बत्तीस अरों वाला चक्र बनाकर उसमें साध्य का नाम लिखकर अन्य अनुष्ठानों को करने से मृत्यु के मुख में गया हुआ व्यक्ति भी जीवित हो उठता है । यहाँ मृत्युरक्षा के अनेक अनुष्ठानोपाय बतलाये गये हैं । रक्षा के अतिरिक्त मारण के लिये क्रोधराज प्रयोग शत्रुत्रास के लिये विकराल प्रयोग, वशीकार के लिये मन्मथ प्रयोग तथा अन्यान्य उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिये अन्य अनेक प्रयोगों का वर्णन है । एक बार फिर अनेक मृत्युञ्जयविधि का वर्णन करते हुए शान्तिकर्म, गुटिकासिद्धि, विषादिमृत्यु के निवारण के उपाय बतलाये गये हैं । अन्त में जो लोग ध्यान करने में सक्षम नहीं हैं उनके लिये विषनिवारण के ओषधीय उपचार बतला कर यह सङ्केत किया गया कि इस पटल में विषशमनार्थ उक्त विधि के अतिरिक्त अन्य उपाय भी हैं । सिद्ध पुरुष उनका भी प्रयोग कर सकता है ।

दशम पटल

इस पटल को 'भुवनाध्वदीक्षाधिकार' पटल कहा गया है । इसमें ब्रह्माण्ड सहित समस्त तत्त्वों एवं उनके अधिष्ठातृदेवों का वर्णन है । यह ब्रह्माण्ड जैसे दो कड़ाहे उल्टे-सीधे रखकर बन्द कर दिये जाँय उस प्रकार के कर्पर के

समान है। इसमें सबसे नीचे कालाग्निरुद्र भुवन है । उसके ऊपर निन्यानवे करोड़ अर्थात् अनन्त संख्या वाले भुवन हैं । इन भुवनों का परिमाण बतलाने के लिये इस पटल में परमाणु से लेकर योजन तक के परिमाण का स्वरूप बतलाया गया है । कालाग्निरुद्र भुवन के अधिपति कालाग्नि रुद्र हैं । ये सपरिवार जिस सिंहासन पर विराजमान हैं वह दो हजार योजन चौड़ा और एक हजार योजन ऊँचा है । कालाग्निरुद्र भुवन के ऊपर पचास करोड़ नरक हैं। इनमें वैतरणी कुम्भीपाक आदि १४० नरक प्रधान हैं । ये त्रिकोणाकार और अत्यन्त भयानक हैं । जो लोग पापी तथा असत्कर्म करने वाले हैं वे इन नरकों में जाते हैं । इन १४० नरकों में मुख्य पैंतीस हैं । चूँकि इनमें से एक-एक नरक के चार-चार भेद हैं इसलिये मुख्य नरक (३५×४ =) १४० हैं । इन पैंतीस नरकों का शोधन करने से पचास करोड़ नरकों का शोधन हो जाता है । इन नरकों का विस्तार बत्तीस करोड़ योजन है । इनके अधिपति कुष्माण्ड हैं जो इन नरकों के ऊपर स्थित हैं ।

इन नरकों के ऊपर पाताल हैं । मुख्य पाताल आभास वरताल आदि आठ हैं । इनकी एक-एक की ऊँचाई नौ हजार योजन है और एक से दूसरे की दूरी एक हजार योजन है । इस प्रकार इनका विस्तार अस्सी हजार योजन हैं । ये सब छत्र के आकार के हैं । जो लोग शिवाराधक हैं वे समस्त ऐश्वर्ययुक्त इन पातालों में सुन्दरियों के साथ रमण करते रहते हैं । सौवर्ण नामक अष्टम पाताल में इन पातालों के हाटक नामक स्वामी विराजमान हैं ।

पाताल के ऊपर बीस हजार योजन विस्तृत भूकटाह है । इस भगवती पृथिवी के मध्य में सुवर्णमय महामेरु पर्वत स्थित है । इस पर्वत के ऊपर मनोवती नगरी है । इसके चारों ओर ऊपर नीचे तत्तद् देवताओं के नगर हैं जिनमें समस्त ऐश्वर्यसम्पन्न दिव्य जीव निवास करते हैं । इष्ट पूर्त्त से पवित्रित शिवार्चनरत धर्मात्मा जीव यहाँ पहुँचते हैं । यहाँ गङ्गा नदी निरन्तर प्रवहमान हैं । गङ्गानदी की उत्पत्ति के विषय में इस पटल में कहा गया है कि—

एक बार क्रीडानिरत पार्वती ने शिव के नेत्रों को अपनी अङ्गुलियों से ढँक लिया । बाद में जब शिव के नेत्र उद्घाटित हुए तो उनमें से जो अश्रुधारा निकली वही गङ्गा नदी हैं । चूँकि शिववक्त्र पार्वती की दशो अङ्गुलियों से ढँका था इसलिये गङ्गा दश स्रोतों में प्रवाहित हुई । उनमें से सात धारायें उनके कपालआवरण में रुक गयी और तीन में से एक विष्णुपुर, दूसरी ब्रह्मलोक और तीसरी सत्यलोक में चली गयी । देवताओं की प्रार्थना पर शिव ने गङ्गा को उत्सृष्ट किया और वह पर्वतों पर होती हुई समुद्र में मिल गयी । गङ्गा के वर्णन के बाद मन्दर गन्धमादन आदि पर्वतों, चित्ररथ वन, मानसरोवर के साथ जम्बूद्वीप का वर्णन है । मेरु और समुद्र के बीच

मेरु के चारो ओर निषध आदि नव पर्वत हैं । जम्बूद्वीप में केतुमाल, इलावृत भारत आदि देश हैं । ये देश तडाग, वन उपवन आदि से समृद्ध हैं । जम्बूद्वीप की भाँति कुमारी द्वीप, मलय द्वीप आदि अन्य द्वीप इस धराधाम पर विराजमान हैं । उनमें भी अनेक देश हैं । तत्तद् देशों के नाम के साथ प्रत्येक देश के अधिपति उनके ऐश्वर्य, प्राकृतिक सम्पदा आहार विहार आदि का विस्तार के साथ वर्णन किया गया है ।

मेरु और लोकालोक पर्वतों के बीच उत्तरायण दक्षिणायन, देवमार्ग, पितृमार्ग आदि का वर्णन कर कहा गया कि पृथिवी का विस्तार एक-सौ करोड़ योजन है । इस भूर्लोक में स्थित भुवनों का शोधन कलादीक्षाप्रकरण में उक्त संस्कारों के द्वारा करना चाहिये । इससे कालाग्नि नरक पाताल और भूर्लोकस्थ अनन्त भुवनों का शोधन हो जाता है ।

कालाग्निरुद्र भुवन से लेकर भूर्लोकस्थ भुवनों का शोधन बतलाने के बाद यह बतलाया गया कि पशु का छेदन आदि करना चाहिये । पशु का चतुर्दश योनि का संहारक्रम से शोधन करना चाहिये । इसके बाद गर्भाधान आदि अड़तालीस संस्कारों का वर्णन करते हुए यह बतलाया गया कि इन संस्कारों से पशु की शुद्धि होती है ।

भुवर्लोक का वर्णन करते हुए कहा गया कि भूपृष्ठ से सूर्यपर्यन्त एक लाख योजन विस्तृत भुवर्लोक है । इसमें दश-दश हजार योजन विस्तार वाले दश वायुमार्ग हैं । एक-एक वायुपथ में नाना प्रकार के मेघ हैं जो जल के साथ मत्स्य उपल रोगोदक आदि की वर्षा करते हैं । इन दशों वायुपथों में कहीं-कहीं स्कन्द के अनुचर विनायक, अधम विद्याधर, अप्सरायें, महात्मा, सिद्धपुरुष, गन्धर्व, अग्निकन्यायें आदि रहते हैं । पञ्चम वायुपथ में ऐरावत आदि आठ हाथी, षष्ठ में गरुड, सप्तम में आकाशगङ्गा, अष्टम में नन्दी, नवम में दक्ष प्रजापति और दशम वायुपथ में आठों वसु ग्यारह रुद्र और द्वादश आदित्य रहते हैं । ये आदित्य और कोई नहीं परमेश्वर की परा ज्ञानशक्ति है जो इस रूप में सन्ताप उत्पन्न करती हैं । इसी प्रकार उनकी परा क्रियाशक्ति चन्द्ररूप से देदीप्यमान है । इन दोनों के ऊपर मङ्गल आदि ग्रह, और उनके ऊपर सप्तर्षि रहते हैं । उनसे एक लाख योजन ऊपर ध्रुवनक्षत्र मण्डल है।

आदित्य के बाद ध्रुवलोक तक स्वर्ग कहा गया है । इसके राजा इन्द्र हैं। स्वर्गलोक से २८५००००० योजन ऊपर महर्लोक, उससे आठ करोड़ योजन ऊपर जनलोक और उससे बारह करोड़ योजन ऊपर तपोलोक है। तपोलोक से सोलह करोड़ योजन ऊपर सत्यलोक हैं । यहाँ ब्रह्मा, चारो वेद, उपनिषद्, पुराण आदि तथा गायत्री स्थित है । ब्रह्मपुरी से दो करोड़ योजन ऊपर

विष्णुपुरी उससे सात करोड़ योजन ऊपर रुद्रपुरी है । इन पुरियों की समृद्धि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है । रुद्र की गोद में उमा विराजमान हैं । वे दोनों शिव की इच्छा से सृष्टि और संहार करते रहते हैं । रुद्रलोक के ऊपर दण्डपाणि का पुर है । ध्यान करने पर यही मोक्षमार्ग का उद्घाटन करते हैं । दण्डपाणि लोक की दशों दिशाओं में दश-दश रुद्र रहते हैं । इनको शतरुद्र कहा जाता है । इनका परिवार एक-एक हजार सदस्यों वाला है। ये सब रुद्र ब्रह्माण्ड में उसी तरह व्याप्त हैं । जैसे मधुमक्खी के छत्ते में मधुमक्खियाँ ।

पृथ्वी तत्त्व से दश-दश गुना योजन ऊपर जल तेज वायु आकाश गुण और अहङ्कारतत्त्व स्थित हैं । बुद्धितत्त्व सौ गुना, प्रधान हजार गुना, पुरुष दश हजार, नियति एक लाख, कला दशलाख, माया एक करोड़, शुद्धविद्या दश करोड़, ईश्वरतत्त्व सौ करोड़, सदाशिवतत्त्व एक हजार करोड़, शक्ति दश हजार करोड़ और व्यापिनीतत्त्व समस्त अध्वा को व्याप्त कर स्थित है । शिव तत्त्व अप्रमेय हैं । इस प्रकार ब्रह्माण्डान्तर्गत भुवनों की संख्या नहीं है ।

ब्रह्माण्ड के ऊपर ग्यारह रुद्रों का पुर है । उसके ऊपर भगवती भद्रकाली का पुर है । समस्त समृद्धि से सम्पन्न एवं दिव्य स्त्रियों से युक्त भगवती भद्रकाली यहाँ रहती हैं । इसी ने महिषासुर का वध किया था । यह भुवन जय के नाम से विख्यात है । निर्बीजदीक्षादीक्षित मुक्त पुरुष इस लोक को प्राप्त होते हैं । जयलोक के ऊपर विजय नामक भुवन है । इसमे एकादश रुद्र रहते हैं । यहाँ के अधिष्ठाता रुद्र वीरभद्र हैं । इसके ऊपर जलीय आवरण है । इसको रुद्राण्ड कहते हैं । इसके भीतर भगवती पृथिवी स्थिति है। यह सब दिशाओं में पर्वतों से घिरी है । गङ्गा भी यहाँ है ।

इस आवरण के ऊपर श्रीनिकेत अथवा पद्मगर्भ नाम से प्रसिद्ध भुवन है । इसमें भगवती महालक्ष्मी रहती हैं । भगवान् विष्णु ने तपस्या कर इनको प्राप्त किया था । यह लक्ष्मी अपने अंश-अंश से सर्वत्र व्याप्त हैं । श्रीपुर के ऊपर सारस्वत लोक है । यहाँ मानस गन्धर्व स्त्रियों से आवृत भगवती सरस्वती रहती हैं । यह भी अंशांशिका रूप से सर्वत्र विराजमान हैं । जलतत्त्व के ऊपर तेजस्तत्त्व है । यहाँ अग्नि भुवन है । इसके बीच में भगवान् शिवाग्नि रहते हैं । ये सूर्य के जनक हैं । अग्नि भुवन के ऊपर वायु तत्त्व का आवरण है । इसके मध्य भगवान् वायु रहते हैं । मारुत नाम वाले देव इनकी उपासना करते रहते हैं । इस तत्त्व के बाहर आकाश तत्त्व व्याप्त है । इसमें रुद्र रहते हैं । आकाश के ऊपर और अहङ्कार के नीचे असंख्य भुवन हैं । इसके ऊपर क्रमशः रस रूप स्पर्श शब्द और पञ्च तन्मात्राओं का मण्डल है। उसके ऊपर क्रमशः सूर्य, सोम और वेद मण्डल हैं । पञ्चतन्मात्रायें एवं सूर्य, सोम, वेद ये आठ परमेश्वर की परा शरीर हैं ।

सूर्य सोम और वेदमण्डल के ऊपर करण मण्डल है । इसमें पाँच अधिपति रहते हैं । इसी प्रकार उत्तरोत्तर अहङ्कार मण्डल और बुद्धि मण्डल है। उनके ऊपर क्रमशः पैशाच, राक्षस, याक्ष, गान्धर्व, ऐन्द्र, सौम्य, प्राजेश और ब्राह्म नामक आठ भुवन हैं । साधक को इन सब का मन्त्रों के द्वारा शोधन करना पड़ता है । पञ्चाष्टक आदि का शोधन करने के बाद क्रोधाष्टक एवं योगाष्टक का शोधन करना चाहिये । योगाष्टक के ऊपर जगन्माता भगवती उमा स्थित हैं । औम नामक रुद्र इनकी उपासना करते रहते हैं । यही दक्षयज्ञ में भद्रकाली के नाम से उत्पन्न हुईं । कात्यायनी दुर्गा आदि इन्हीं के नाम हैं ।

उपर्युक्त आठ भुवनों के ऊपर सुचारु नामक भुवन है । जिसमें जगन्नाथ उमापति रहते हैं । तीस करोड़ रुद्र और ब्राह्मी आदि सात मातायें इनकी सेवा में लगी रहती हैं । शर्व भव रुद्र आदि आठ-आठ मूर्त्ति धारण कर यह उमानाथ भूमि आदि पाँच तथा सूर्य, चन्द्र यजमान इस प्रकार आठ मूर्त्ति की सृष्टि करते हैं । इसके ऊपर बारह सदाशिव स्थित हैं । उनके ऊपर महादेवाष्टक रहते हैं । इस प्रकार बुद्धितत्त्व में स्थित देवों का वर्णन इस पटल में किया गया है ।

बुद्धितत्त्व के ऊपर गुणतत्त्व है । इसमें गुरुओं की तीन पङ्क्तियाँ रहती हैं। प्रथम तमोगुणी पङ्क्ति बत्तीस रुद्रों वाली, द्वितीय रजोगुणी पङ्क्ति तीस रुद्रों वाली तथा तीसरी सत्त्वगुणी पङ्क्ति इक्कीस रुद्रों वाली है । गुणों के ऊपर प्रधानतत्त्व का आवरण है जिसमें आठ रुद्र रहते हैं । पुरुष तत्त्व में नव तुष्टियाँ और अष्ट सिद्धियाँ रहती हैं । इसके ऊपर सनत्कुमार गौतम आदि गुरु शिष्य की तीन पङ्क्तियाँ रहती हैं । गुरुओं की संख्या बाइस और शिष्यों की संख्या पच्चीस है। इनके अतिरिक्त इस पुरुष तत्त्व में नाड्यष्टक, विमुद्राष्टक, देहपाश अर्थात् दश धर्म और षोडश विकार भी रहते हैं जिनका शोधन करना चाहिये। इनके अतिरिक्त बुद्धि के धर्म आदि गुण, त्रिविध अहङ्कार, शब्द आदि पाँच विषय, काम, क्रोध आदि आगन्तुक विषयों का भी शोधन करना पड़ता है । आठ गणपाश और आठ विघ्नेश्वर पाश के साथ अनुक्त पाश भी शोध्य होते हैं।

पुरुषतत्त्व के ऊपर नियति तत्त्व है । उसके अधिष्ठाता वामदेव आदि दश रुद्र हैं । इसके शोधन के साथ वर्त्तमान कालतत्त्व का भी शोधन करना पड़ता है । इसके नियन्त्रक शुद्ध, बुद्ध आदि दश शिव हैं । रागतत्त्व में कल्याण आदि पाँच गुरु रहते हैं । इसके ऊपर विद्यातत्त्व है । जिसमें स्थित भुवनों के अधिष्ठाता वाम ज्येष्ठ आदि हैं । इसी प्रकार ऊर्ध्ववर्त्ती कलातत्त्व में तीन

महादेव स्थित हैं । कलातत्त्व के ऊपर मायातत्त्व है । यह सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त कर स्थित है । इसमें गहनेश से अनन्त तक बारह रुद्र स्थित हैं । ये माया के अधो भाग मध्य भाग एवं ऊर्ध्व भाग में स्थित हैं । माया के ऊपर शुद्धविद्या है जिसमें गुरुशिष्यों की तीन पङ्क्तियों में ऋषिकुल विराजमान हैं ।

शुद्धविद्या के ऊपर शक्तिरूपी माया है (जब कि पूर्वोक्त मायाद्वय तत्त्वरूप और ग्रन्थिरूप हैं) । दीक्षा के द्वारा सर्वजीवविमोहिनी इसी माया शक्ति का भेदन होता है । इसके ऊपर महाविद्या तत्त्व है । यह सभी विद्याओं का मूल उत्स तथा संसार की सृष्टि-प्रलय का कारण है । इसमें दशहजार लाख परिवारों वाले सात करोड़ मन्त्र रहते हैं । इसके बाहर ईश्वर तत्त्व है । इसके अधिष्ठाता ईश्वर हैं जिन्होंने आठ विज्ञानकेवली या विद्येश्वरों की सृष्टि की । इनके असंख्यदलपद्म वाले आसन में साढ़े तीन करोड़ मन्त्र विराजमान हैं । ईश्वर की गोद में मायीयवर्ण रूपा मातृका या विद्या विराजमान है । ईश्वरतत्त्व में रूपावरण, नामक भुवन है जिसमें धर्म ज्ञान वैराग्य और ऐश्वर्य नामक रुद्र असंख्य परिवार के साथ रहते हैं । इसमें पन्द्रह भुवन हैं जिनको शरीर के अन्दर तालु के ऊपर स्थित समझना चाहिये । पन्द्रह भुवनों के अन्दर छोटे-छोटे भुवन हैं । कुल मिलाकर ये भुवन उनसठ हैं । इनका शोधन करना पड़ता है । ईश्वर तत्त्व के ऊपर सुशिवावरणतत्त्व है । उसमें सदाशिव रहते हैं। ये ओङ्कारेश आदि दश शिवों से आवृत हैं । ये भी अट्ठारह रुद्रों से आवृत हैं । इच्छाशक्ति इनकी अङ्कशायिनी है । सदाशिव का परिवार असंख्य है । ये सब मायाधर्म से शून्य निर्मलस्वान्त हैं ।

सदाशिव आवरण के ऊपर बिन्दु आवरण है । निवृत्ति आदि चार कलायें इसका परिवार हैं जब कि शान्त्यतीत ये स्वयं हैं । बिन्दु के ऊपर अर्धचन्द्र, उसके ऊपर रोधिनी स्थित है । शरीर के अन्दर १/८ वर्णमात्रा का इसका स्वरूप है । यह रोधिनी ब्रह्मा आदि को भी ऊपर जाने से रोक देती है । केवल सदाशिव ही इसका भेदन कर स्थित हैं । रोधिनी के ऊपर नाद तत्त्व है । यह समस्त नाड़ियों का आधार है । नाद के ऊपर ब्रह्मबिल है । जो एक अरब करोड़ रुद्रों से युक्त है । उसके अधिष्ठाता ब्रह्मा हैं । (ये ब्रह्मा ब्रह्माण्ड के ब्रह्मा से भिन्न हैं) इसकी शक्ति ब्रह्माणी है जो मोक्षमार्ग को अवरुद्ध कर स्थित है साथ ही मोक्षप्रदात्री भी है । विज्ञानभैरव में इसे 'शैवीमुख' कहा गया है । योगी इसका भेदन कर ऊपर जाता है ।

ब्रह्मबिल के ऊपर शक्ति है । यही कुण्डलिनी है । इसे ऊर्ध्वकुण्डलिनी कहते हैं । यह समस्त भुवनों का आधार है । इसमें स्थित देवतायें भी शक्ति नाम से जानी जाती हैं । **इनके बीच में व्यापिनी शक्ति है और पूर्व आदि दिशाओं में अन्य शक्तियाँ रहती हैं । इसके ऊपर शिवतत्त्व है । इसमें भी**

भुवन है । शिवतत्त्व के अधिष्ठाता शिव अनेक अरब करोड़ रुद्रों से परिवेष्टित हैं । शिवतत्त्व के शोधन के बाद योगी ऊपर की ओर समना तत्त्व में पहुँचता है । काल, क्रम और मन की स्थिति यहीं तक है । इसी से अधिष्ठित भगवान् शिव नीचे के पञ्चकारणों (= ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव) को नियन्त्रित करते हैं ।

इस समना शक्ति का ध्यान आवाहन पूजा करने के बाद वागीश्वरी का आवाहन आदि अनुष्ठित कर पशुयाग आदि करने चाहिये । फिर त्रितत्त्व का शोधन कर विश्लेष पाशच्छेद आदि करने के बाद साधक शिवकुम्भ, भैरवाग्नि की पूजा तथा पूर्णाहुति करे । समना के ऊपर उन्मना तत्त्व है जो कि गुरुवक्त्र या निर्वाण भी कहा जाता है । उन्मना के साथ योग होने पर योगी कारणातीत निरञ्जन व्योमातीत परमतत्त्व को प्राप्त कर लेता है । यही वास्तविक मुक्ति है ।

एकादश पटल

इस पटल का नाम 'सृष्टिसंहार' पटल हो सकता है । इसमें अध्वा की सृष्टि और उसके संहार का दिग्दर्शन है । सूक्ष्म स्वच्छन्दभैरव सृष्टि के निमित्त कारण हैं । बिना किसी कामना के वे अपने तेज से समनाशक्ति को क्षुब्ध कर लीलामात्र से सृष्टि करते हैं । समनाशक्ति रूप व्योम से शून्य, शून्य से **स्पर्श और उससे नाद उत्पन्न हुआ । यह नाद समस्त प्राणियों में सर्वदा स्थित और सर्वदा नदन करता रहता है । नाद से बिन्दु, बिन्दु से सदाशिव उत्पन्न** हुआ । मुद्रा मन्त्र क्रिया ज्ञान और इच्छा रूप भी वही सदाशिव है । वस्तुतः एक ही शिव समना और उन्मना रूप से पर और (मुद्रा आदि) अपर रूप में स्थित है । शक्ति, ब्रह्मबिल, सुषुम्ना, नादान्त और बिन्दु में भी वही व्याप्त है। दूसरे शब्दों में अनाश्रित अनाथ अनन्त व्योमरूपी और व्यापी शिव ही ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव के नाम से स्थित है । शक्ति के आधार हूहुक हैं । जल, अग्नि, वायु, नभस्, तन्मात्रायें, इन्द्रियाँ, विषय, मन, अहङ्कार, बुद्धि, गुण, प्रकृति, पुरुष, नियति, काल, राग, विद्या, कला, माया, शुद्धविद्या, ईश्वर, सदाशिव, बिन्दु, अर्धचन्द्र, रोधिनी, नाद, नाड़ी, अधो ब्रह्मबिल, शक्ति, व्यापिनी, समना और उन्मना इनमें पूर्व-पूर्व कार्य हैं और उत्तरोत्तर उनके कारण हैं ।

जिस प्रकार आत्मा अर्थात् अणु असंख्य हैं उसी प्रकार ब्रह्माण्ड और प्रकृत्यण्ड भी असंख्य हैं । किन्तु मायाण्ड और शाक्ताण्ड एक-एक हैं । पूर्व-पूर्व अण्ड व्याप्य और उत्तरोत्तर अण्ड व्यापक हैं । ब्रह्माण्ड पार्थिव तत्त्व है । उसके अधिष्ठाता ब्रह्मा हैं । जल के विष्णु तेज के रुद्र, वायु के ईश्वर **और आकाश में सदाशिव स्थित हैं । इसी प्रकार ब्रह्मा को सूर्य, विष्णु को**

सोम, रुद्र को ग्रहों का स्वामी, ईश्वर को नक्षत्रों का स्वामी और सदाशिव को यजमान कहा गया है। सद्योजात वामदेव अघोर तत्पुरुष और ईशान ये पञ्चवक्त्र भी क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव आदि हैं। उसी क्रम में सद्योजात आदि ऋग् यजुः साम अथर्व और सर्वविद्यात्मक हैं। लौकिक वैदिक आध्यात्मिक, अतिमार्ग (= सांख्य आदि) और मन्त्र भी इसी क्रम से निकले हैं। तत्त्वों का भी पाँच विभाग है— पृथिव्यादि प्रधानान्त के व्यापी ब्रह्मा हैं। इसी प्रकार पुरुष के विष्णु, नियति से माया तक के रुद्र, शुद्ध विद्या के ईश्वर और उसके ऊपरी तत्त्व के अधिष्ठाता सदाशिव हैं। इसी प्रकार त्रितत्त्व त्रिशक्ति आदि की दृष्टि से भी विश्व के अधिष्ठाताओं की चर्चा इस पटल में की गयी है।

प्रस्तुत पटल में सृष्टि के एक और क्रम की चर्चा की गयी है। शिव से सदाशिव, उससे विद्या, विद्या से माया उत्पन्न हुई। परमेश्वर विद्या के द्वारा ज्ञानक्रियात्मक सात करोड़ मन्त्रों की सृष्टि करते हैं। ये मन्त्र पृथिवी से लेकर सदाशिव तत्त्व तक के अन्दर रहने वाले प्राणियों के ऊपर अनुग्रह करते रहते हैं। भगवान् अनन्तनाथ इच्छाशक्ति से युक्त ज्ञानशक्ति से समालोचन कर अपनी क्रियाशक्ति के द्वारा माया में आत्मवर्ग को स्थापित कर सबको एक साथ उसी प्रकार क्षुब्ध करते हैं जैसे बिना किसी लक्ष्य के बेर के पेड़ पर दण्ड फेंकने से बेर के फल एक साथ ऊपर-नीचे अगल-बगल गिरते हैं। जो जीव मुक्ति के पात्र होते हैं वे ऊपर चले जाते हैं और अपात्र जीव नीचे आ जाते हैं।

माया से कला, विद्या, राग, काल और नियति कदम्ब पुष्प की भाँति एक साथ उत्पन्न होते हैं। पुरुष और प्रकृति भी माया के उत्पाद हैं। प्रकृति से गुण, गुणों से बुद्धि तत्त्व उत्पन्न हुये। इसी प्रसङ्ग में यहाँ भावभेदों का भी विस्तृत वर्णन है। लौकिक, पाञ्चरात्र, वैदिक, बौद्ध, जैन, सांख्य, योग, अतिमार्ग, कपालव्रती, पाशुपत मत की मोक्षविषयक दृष्टि की समीक्षा भी इस पटल में प्रस्तुत है। आगे चलकर बुद्धि से त्रिविध अहङ्कार, अहङ्कार से इन्द्रियाँ एवं पञ्चतन्मात्रायें और पञ्चतन्मात्राओं से पञ्चमहाभूतों की उत्पत्ति बतलायी गयी। इन तत्त्वों के उपस्कार की दृष्टि से आत्मा का अबुध, बुध आदि वर्गीकरण किया गया है। माया के पाँच कञ्चुकों से आवृत यह जीव त्रिगुण आदि बन्धनों से बद्ध होकर माया से लेकर पृथिवी तक के भुवनों में नाना योनियों में भ्रमण करता और विषयों का भोग करता हुआ धर्माधर्म बीज का सञ्चय करता रहता है। जीव के लिये प्रयुक्त पुरुष, भोक्ता, क्षेत्रज्ञ, बुध आदि पदों का स्वारस्य भी प्रस्तुत पटल में स्पष्ट किया गया है। आगे चलकर ग्यारह इन्द्रियों के ग्यारह प्रकार के असामर्थ्य, बुद्धि तथा अहङ्कार के

भेद, दश प्रकार के धर्म, ज्ञान के भेद वैराग्य, ऐश्वर्य, नव तुष्टि, अष्टसिद्धि, अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और असिद्धि, अनैश्वर्य, जीवों में गुणत्रय की व्याप्ति बतलायी गयी है। लौकिक तार्किक आदि को नरक की प्राप्ति और पाशुपत तथा कौल को मोक्ष मिलता है—यह भी बतलाया गया और अन्त में कहा गया कि दीक्षा से बढ़कर मोक्ष, मातृका से श्रेष्ठ विद्या एवं अध्वप्रक्रिया से उत्तम ज्ञान नहीं है।

संहारप्रक्रिया के वर्णन क्रम में पहले काल के सूक्ष्मतम अवयव क्षण से प्रारम्भ कर लव, निमेष, काष्ठा आदि की चर्चा की गयी है। दो अयनों का एक मानुषवर्ष होता है। एक मानुष वर्ष का देवताओं का एक दिन होता है। इस प्रकार मनुष्य के ३६० वर्षों का एक दिव्य (= देवताओं का) वर्ष होता है। १२००० दिव्य वर्षों का एक चतुर्युग होता है। इसमें ४००० दिव्य वर्ष सतयुग ३००० वर्ष त्रेता २००० वर्ष द्वापर और १००० दिव्य वर्ष कलियुग होता है। शेष दो हजार वर्ष चारो युगों का सन्धिकाल होता है जो कि आदि और अन्त में तत्तद् युगों का दशांश होता है। मानुष वर्ष के अनुसार एक चतुर्युगी का मान ४३२०००० वर्ष होता है। इकहत्तर चतुर्युगी का एक मन्वन्तर होता है। इस प्रकार चौदह मन्वन्तरों का एक कल्प होता है। यह ब्रह्मा का एक दिन होता है। इतनी ही बड़ी उनकी रात्रि भी होती है। एक मन्वन्तर बीतने पर और दूसरे मन्वन्तर का आरम्भ होने के बीच पाँच हजार दिव्य वर्ष का सन्धिकाल होता है। एक मन्वन्तर एक इन्द्र का शासनकाल होता है। इस प्रकार ब्रह्मा के एक दिन में चौदह इन्द्र शासन करते हैं।

ब्रह्मा का दिन बीतने पर जब रात्रि का प्रारम्भ होता है तो यह प्रारम्भ सृष्टि के संहार का प्रारम्भ होता है। ब्रह्मा इस समय सो जाते हैं। इनके सोने पर कालाग्नि अपना नेत्र खोल कर ऊपर की ओर देखती है। इस निरीक्षण काल में उनके दक्षिण मुख से एक लाख योजन विस्तृत महाज्वाला निकल कर ऊपर की ओर बढ़ती है। उस समय ऊर्ध्वलोकस्थ प्राणियों के सुख-दुःख क्षीण हो जाते हैं फलतः वे मूढ़ होकर सुप्त हो जाते हैं और ब्रह्मलोक में सन्मात्र होकर पड़े रहते हैं लेकिन रुद्रलोक एवं पाताल लोक इस अग्निताप से अप्रभावित रहते हैं। जब समस्त लोक जीवशून्य हो जाता है तब वह ज्वाला पाताल नरक सहित भूर्भुवः स्वः लोकों को जला डालती है। फिर तेज हवायें चलती हैं और ब्रह्मा के स्वेद से उत्पन्न जल जगत् को समुद्र बना देता है।

रात्रि बीत जाने पर ब्रह्मा पुनः पूर्व व्यवस्था के अनुसार छः प्रकार की सृष्टि करते हैं। जब-जब ब्रह्मा का दिनक्षय होता है तब तब सृष्टि का संहार होता है। इस प्रकार ब्रह्मा के एक-सौ वर्ष पूर्ण होने पर महाकल्प होता है।

तब ब्रह्मा अपने से ऊर्ध्ववर्ती पर तत्त्व (= विष्णु) में लीन हो जाते हैं और यह महाप्रलय होता है । इस समय उस ब्रह्मा के द्वारा अधिष्ठित ब्रह्माण्ड नष्ट हो जाता है । यही पौराणिकों का प्रलय है । इससे आगे की स्थिति पर पुराण मौन है किन्तु आगम शास्त्रों में इसका वर्णन मिलता है । ब्रह्मा का एक-सौ वर्ष विष्णु का एक दिन होता है । इस मान से विष्णु एक-सौ वर्ष जीवित रहते हैं । उसके बाद वे अपने ऊर्ध्ववर्ती परतत्त्व अर्थात् रुद्र में लीन हो जाते हैं । विष्णु की आयु का एक-सौ वर्ष रुद्र का एक दिन होता है । इस दिन में रुद्र असंख्य ब्रह्मा-विष्णु की सृष्टि करते हैं । उनका एक-सौ वर्ष पूर्ण होने पर वे भी परतत्त्व में लीन हो जाते हैं । निष्कर्ष यह है कि परमेश्वर की ब्राह्मी वैष्णवी रौद्री शक्ति से अधिष्ठित होकर ही ये सब अपने-अपने लोकों के ऊपर शासन करते हैं । रुद्र के ऊपर शतरुद्रों का शासन है । रुद्रों का एक-सौ वर्ष शतरुद्रों का एक दिन होता है । शतरुद्रों का एक-सौ वर्ष पूर्ण होने पर ब्रह्माण्ड का नाश हो जाता है । यह पार्थिवाण्ड जलतत्त्व में विलीन हो जाता है और जल आदि क्रम से अपने-अपने कारणों में लीन हो जाते हैं । इस प्रकार काल जलतत्त्व से लेकर मायातत्त्व तक का संहार कर देता है । उसके ऊपर वर्तमान शुद्ध अध्वा का संहार अघोर करते हैं । इसी क्रम से सदाशिव का दिनक्षय होता है जो महाप्रलय कहलाता है । सदाशिव भी बिन्दु अर्धचन्द्र रोधिनी का भेदन कर नादतत्त्व में लीन हो जाते हैं । नाद ब्रह्मबिल का भेदन कर शक्ति में लीन हो जाता है । शक्ति के ऊपर परार्धकाल तत्त्व है जो शिवतत्त्व में स्थित व्यापीश का प्रातःकाल होता है । वह व्यापीश व्योमस्वरूप में, व्योम अनन्तेश में, अनन्तेश अनाश्रित में और वह अनाश्रय में अपने कालपरिमाण के अनुसार शासन करने के बाद लीन हो जाते हैं । यह अनाश्रय ही समना है उसके ऊपर काल नहीं है । जहाँ काल नहीं है वह उन्मना तत्त्व कहलाता है जो कि नित्योदित स्थिति है ।

द्वादश पटल

इस पटल की संज्ञा 'तत्त्वविज्ञानाधिकार' पटल हो सकती है । पृथिवी से लेकर शिवपर्यन्त तत्त्वों के वर्णन—क्रम में पृथिवी को कठिनरूपा बतलाया गया है । इसमें पञ्चमहाभूतों के पाँचों गुण हैं । शरीर में मांस अस्थि आदि पार्थिवांश है । गन्ध को छोड़कर चार गुणों वाला जल, कफ, रक्त, मूत्र आदि के रूप में देह में विद्यमान है । आहार आदि के पाक तथा शारीर ऊष्मा के लिये त्रिगुणमय तेज देह में स्थित है । श्वास पश्वास मलमूत्रत्याग आदि के रूप में वायु दो गुणों वाला होकर स्थित है । शरीर में दो आँख, दो कान, एक मुख और मलमूत्र त्याग के अङ्ग इन नव छिद्रों के रूप में शब्द गुण वाला आकाश स्थित है । आगे कहा गया कि वाणी चार प्रकार की है ।

इसके बाद पञ्च कर्मेन्द्रियों पञ्च ज्ञानेन्द्रियों के कार्यों को बतला कर वाणी, श्रोत्रेन्द्रिय के सात स्वर, उच्छ्वास सुरमण्डल को बतलाकर भेरी आदि के स्थूल शब्दों का वर्णन किया गया हैं । इसी प्रकार त्वक् चक्षु रसना और घ्राणेन्द्रियों के विषय या कार्य बतलाये गये हैं । तत्पश्चात् मन त्रिविध अहङ्कार और बुद्धि की देह में स्थिति बतलायी गयी है । धर्म आदि आठ बुद्धि के गुण हैं । इनमें से धर्म वैराग्य ऐश्वर्य अधर्म अज्ञान अवैराग्य और अनैश्वर्य ये मनुष्य को बन्धन में डालते हैं । ज्ञान बन्धन से मुक्ति दिलाता है । आगे चलकर प्रकृति के तीन गुणों के धर्मों को बतलाकर कहा गया कि चूँकि तीनों गुणों के चिह्न मनुष्य में दिखलायी पड़ते हैं अतः मनुष्य त्रिगुणमय कहा जाता है । प्रकृति कर्त्री है । पुरुष अकर्त्ता है । इसी प्रकार का वर्णन कर सांख्यज्ञान की चर्चा की गयी है अर्थात् प्रकृति के स्वभाव को सम्यक् जानने वाला प्राकृत गुणों के बन्धन से मुक्त हो जाता है यद्यपि सांख्यदर्शन के अनुसार यही मुक्ति है किन्तु आगम की दृष्टि से यह वास्तविक मुक्ति नहीं है ।

शरीर की तत्तत् इन्द्रियों एवं मन में पृथिवी से प्रकृतितत्त्व तक का ध्यान करने वाला पुरुष सिद्ध हो जाता है । इसे प्राकृतयोग कहा गया है जो कि मोक्षमार्ग पर ले जाता है । पुरुष का ध्यान चित्स्वरूप, पद्म के मध्य में स्थित, समस्त शरीर में व्याप्त के रूप में करना होता है । इस पटल में आगे जीव के स्वरूप का वर्णन कर तत्पश्चात् माया के पाँच कञ्चुकों का ध्यान करने को कहा गया है । इससे अनेक प्रकार की सिद्धि प्राप्त होती है । निर्वैरपरिपन्थिनी माया और चतुर्वर्णा शुद्धविद्या का ध्यान करने वाला योगी सर्वज्ञ, कामरूपी तथा नानासिद्धिसमन्वित होता है। इसके बाद ईश्वर के पञ्चवक्त्र के ध्यान का फल बतलाते हुए सदाशिव के ध्यान का फल कहा गया है ।

सदाशिव के ध्यान के बाद बिन्दु, शक्ति, व्यापिनी, समना और उन्मना के ध्यान से अनेक सिद्धियाँ मिलती हैं—यह कहा गया । इसके उपरान्त शिव का ध्यान करना चाहिये । शिव का ध्यान करने से योगी शिवधर्मों से मुक्त होकर शिवतुल्य हुआ सिद्ध और मुक्त हो जाता है ।

त्रयोदश पटल

इस पटल को 'स्वच्छन्दयागाधिकार' पटल कहा जा सकता है । याग के सन्दर्भ में मूलबीजाक्षर का स्वरूप बतलाया गया तथा कहा गया कि प्रणवासन पर आरूढ परमेश्वर की पूजा करनी चाहिये । शिवधर्मीसाधकदीक्षा-दीक्षित व्यक्ति दश लाख जप और नरमांस का एक लाख होम करने पर असाध्य को सिद्ध कर लेता है । कारिकाकोश नाम से वशीकरण के अनेक

प्रकार के अनुष्ठान यहाँ बतलाये गये हैं । वशीकरण के साथ-साथ स्तम्भन, उन्मादन, प्रत्यानयन, आकर्षण के अनेक प्रयोगों की भी चर्चा इस पटल में है। इन अनुष्ठानों को दीक्षित व्यक्ति ही कर सकता है साधारण मनुष्यः नहीं ।

चतुर्दश पटल

चतुर्दश पटल 'मुद्राधिकार' पटल के नाम से व्यवहृत किया जा सकता है। इस पटल में कपाल, खट्वाङ्ग, खड्ग, स्फर, अङ्कुश, पाश, नाराच, पिनाक, अभय, वरद, घण्टा, त्रिशूल, दण्ड, वज्र, मुद्गर, वल्लकी, परशु मुद्राओं के स्वरूप का वर्णन करने के बाद इनके मानस रूप को बतलाया गया है । कोई मुद्रा धवल, कोई मरकत, कोई नीलमणि, कोई स्वर्णिम आदि रूपों वाली है । ये मुद्रायें भगवान् स्वच्छन्द भैरव की प्रतिरूप हैं । इनके कायिक, वाचिक एवं मानसिक तीन रूप हैं । पहले कायिक रूप का, फिर धवल आदि मानसिक रूप का वर्णन कर इनके वाचिक रूप को बतलाते हुए कहा गया कि पहले प्रणव, तत्पश्चात् मुद्रा का नाम, फिर 'नमः' जोड़ने से इनका वाचिक रूप निष्पन्न होता है । ये मुद्रायें निर्विघ्नकरण और साध्य की सिद्धि देने वाली हैं ।

पञ्चदश पटल

यह 'छुम्मकाधिकार' पटल है । इसमें छुम्मका (= पारिभाषिक शब्दों) को बतलाया गया है । उदाहरण के लिये भैरव को धाम, साधक को गिरि, पुत्रक को विमल, मद्य को हर्षण, लिङ्ग को सन्तोषजनन, भग को प्रीतिवर्धन आदि के नाम से जानना चाहिये ।

तीव्र शक्तिपात के कारण मेलक के सम्पन्न होने पर देवियाँ साधक को भिन्न-भिन्न तत्त्वों के साक्षात्कार के लिये सङ्केत करती है जैसे जो देवी शिखा का स्पर्श करे वह साधक को शक्ति की सिद्धि बतलाती है । इसी प्रकार शिर, ललाट, तालु आदि के प्रदर्शन के द्वारा साधक को बिन्दु ईश्वर, रुद्र आदि की सिद्धि का सङ्केत प्राप्त होता है । सम्पूर्ण शरीर के प्रदर्शन से महाध्वा की सिद्धि का सङ्केत मिलता है । ये देवियाँ वीराचारी साधक को चरु देती हैं जिसके भक्षण से साधन भैरवतुल्य हो जाता है ।

विषयानुक्रमणिका

सङ्केत सूची

ई०प्र०	—	ईश्वरप्रत्यभिज्ञा
ई०प्र०वि०वि०	—	ईश्वरप्रत्यभिज्ञाविवृतिविमर्शिनी
ऋ०	—	ऋग्वेद
कालो०	—	कालोत्तरतन्त्र
किरणा०	—	किरणावली
कि०	—	किरणावली
क्रि०	—	क्रियापाद (मृगेन्द्रतन्त्र)
त०त्र०नि०का०	—	तत्त्वत्रयनिर्णयकारिका
त०सं०	—	तत्त्वसंग्रह
तं०आ०	—	तन्त्रालोक
तं०सां०, आ०	—	तन्त्रसार, आह्निक
न्या०सू०	—	न्यायसूत्र
पात०	—	पातञ्जलयोगसूत्र
प्र०वा०	—	प्रमाणवार्त्तिक
बृ०उ०	—	बृहदारण्यक उपनिषद्
भ०गी०	—	श्रीमद्भगवद् गीता
मा०वि०	—	मालिनीविजयतन्त्र
मा०वि०तं०	—	मालिनीविजयतन्त्र
यो०सू०	—	योगसूत्र
वाम०स०	—	वामनसंहिता
वि०भै०	—	विज्ञानभैरव
शि०दृ०	—	शिवदृष्टि
शि०सू०	—	शिवसूत्रम्
श्वे०उ०	—	श्वेताश्वतर उपनिषद्
सू०जा०	—	सूर्यजातक
सा०का०	—	सांख्यकारिका
स्तोत्राव०	—	स्तोत्रावली
स्प०	—	स्पन्दकारिका
स्व०तं०	—	स्वच्छन्दतन्त्र

॥ श्रीः ॥

विद्याभवन प्राच्यविद्या ग्रन्थमाला
१५५

स्वच्छन्दतन्त्रम्

(द्वितीयो भागः)

(७-१५ पटलानि)

श्रीमहामाहेश्वराचार्यवर्यश्रीक्षेमराजविरचितस्वच्छन्दोद्योताख्य-
व्याख्यानेनज्ञानवतीहिन्दीभाष्येण च विभूषितम्

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी

व्याकरणाचार्यः
एम० ए० (संस्कृत), पी-एच्०डी०, लब्धस्वर्णपदकः
शास्त्रचूडामणि विद्वान्
संस्कृतविभागः, कलासङ्कायः,
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी

चौखम्बा विद्याभवन
वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

॥ तन्त्रसारसङ्ग्रहः ॥

TANTRA SĀRA SAṄGRAHA

(WITH COMMENTARY)

A treatise teaching formulae and rites for the attainment of health and happiness and even of super-human power

OF

Nārāyaṇa (Tāntric) of Śivapuram

EDITED
CRITICALLY WITH INTRODUCTION
IN ENGLISH & SANSKRIT

BY

VAIDYARATNA
Pandit M. DURAISWAMI AIYANGAR, A.K.A.C.,
Āyurvedabhūṣaṇa, Āyurvedācārya
Ayurvedic Medical Practitioner (Regtd.).

GOVERNMENT ORIENTAL MANUSCRIPTS LIBRARY,
MADRAS.

1950

Price Rs. 15—4—0

विषयानुक्रमणिका

CONTENTS

योगतन्त्र-ग्रन्थमाला

(३)

प्रधानसम्पादकः

बदरीनाथशुक्लः

सञ्चालकः

अनुसन्धानसंस्थानम्

वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी ।

तन्त्रसंग्रहः

[प्रथमो भागः]

सवृत्तिका विरूपाक्षपञ्चाशिका, सटीका साम्बपञ्चाशिका,
सव्याख्यं त्रिपुरामहिम्नस्तोत्रम् , स्पन्दप्रदीपिका, अनुभवसूत्रम्,
वातूलशुद्धाख्यतन्त्रं च

सम्पादकः

म० म० गोपीनाथकविराजमहोदयः

योगतन्त्रविभागाध्यक्षः

वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी ।

वाराणस्याम्

२०२७ विक्रमसंवत्सरे] १८९२ तमे शकाब्दे [१९७० ख्रीस्ताब्दे

आद्यमावेदनम्

महामहोपाध्यायपण्डितप्रवरश्रीगोपीनाथकविराजमहोदयानामाध्यक्ष्ये प्रवर्तमानस्य योगतन्त्रविभागस्य स्तुत्येन प्रयासेन सङ्कलनसम्पादनाभ्यां प्रकाशनं नीयमानान् षडागमग्रन्थान् प्रस्तुतसंग्रहात्मना तन्त्रविद्याविपश्चितां पुरत उपहरतो मे मानसं निरतिशयानन्दसन्दोहेन सम्पूर्यमाणमास्ते, तत्र संग्रहान्तर्गतग्रन्थानामध्ययने विद्वज्जनानां निष्कम्पप्रवर्तनमभिलक्ष्य क्रमेण कश्चन संक्षिप्तो विषयपरिचयस्तेषामत्रोपनिबध्यते।

विरूपाक्षपञ्चाशिका

'विरूपाक्षपञ्चाशिका'शब्दो विरूपाक्षस्य पञ्चाशिकेति व्युत्पत्त्या पञ्चाशिकाशब्देन तन्नामकं शास्त्रं विरूपाक्षशब्देन तत्कर्तारं च बोधयति, विरूपाक्षो हि परमशिवभट्टारकस्य विश्वानुग्रहसम्पिपादयिषामूलको विरूपाक्षनाथपादनामाऽवतारः। स हि दिविषदां नाथस्यागमविद्यारहस्यविबोधनाय समस्तसंवित्सिद्धान्तार्थभूतं पञ्चाशिकानामकं शास्त्रं रचयामास, तच्च शास्त्रं स्कन्धचतुष्टये विततम्।

प्रथमे स्कन्धे 'विमतिपदमङ्ग सर्वम्' इत्याद्यारभ्य 'ईश्वरता कर्तृत्वं स्वतन्त्रता' इत्याद्यन्ताः सप्त श्लोकाः सन्ति। एभिः श्लोकैः शरीरबहिर्भावेन प्रतीयमानस्य अनाश्रितादिभूम्यन्तस्य सम्पूर्णविश्वस्य परमशिवस्य परमात्मनो जीवात्मनश्च शरीरत्वमनेकाभियुक्तिभिरुपपादितम्।

द्वितीयस्कन्धे 'प्रत्यवमर्शात्मासौ चितिः' इत्याद्युपक्रम्य 'शक्तिर्माया प्रकृतिः' इत्याद्यन्तास्त्रयोदश श्लोकाः सन्ति, एभिः श्लोकैः प्रकाशस्य विश्वात्मकताऽनेकविधाभियुक्तिभिस्तथा प्रतिपादिता यथा देहदेहिभावादिभेदभ्रमः समूलमुन्मूलितः स्यात्।

तृतीयस्कन्धे 'अहमेकोऽनस्तमित' इत्यारभ्य 'अस्तमितमर्थजातम्' इत्याद्यन्तैरेकोनविंशतिश्लोकैश्चितो विश्वात्मकताया असम्भावनाविपरीतभावनाभ्यां परिभवानर्हत्वमुपपादितम्।

प्रकाश एवैको भावाभावात्मकजगदाकारेण परिस्फुरति। सः, त्वम्, अहमित्येवं त्रिधा प्रतीयमानाः पुरुषाः परमार्थतः प्रत्यवमर्शात्मानः प्रकाशलक्षणान्महापुरुषान्न व्यतिरिच्यन्ते, इत्थमुक्तरीत्या भिन्नतयाऽवभासमानं शब्दार्थोभयात्मकं कृत्स्नं जगत् प्रकाशमात्रमेव पर्यन्ते पर्यवस्यतीत्यादि तत्त्वं स्कन्धेऽस्मिन् प्रतिपादितम्।

चतुर्थः स्कन्धो विभूतिस्कन्ध आख्यायते। अस्मिन् 'मत्स्थमपि भुवनवृन्दम्' इत्याद्यारभ्य 'इति बोधितः स' इत्याद्यन्तास्त्रयोदश श्लोकाः सन्ति। तत्र प्रथमेन

चतुष्केण अप्रबुद्ध-प्रबुद्धकल्प-प्रबुद्ध-सुप्रबुद्धकल्प-सुप्रबुद्धरूपाणां पञ्चविधप्रमातॄणां प्रतीतिप्रकाराः प्रदर्शिताः। तदनन्तरं श्लोकाष्टकेन सुप्रबुद्धस्य सिद्धयोगिनः प्रमातुरिच्छामात्रेण विविधानां विभूतीनामाविर्भावस्वरूपमुपवर्णितम्।

अन्तिमेन उपसंहारश्लोकेन बोधोदयलब्धशक्तितत्त्वावेशस्यापगताखिलमलस्य पशुभावमुक्तस्येन्द्रस्य शिवत्वलाभं वर्णयता सर्वः साधकश्चरमे स्वात्मानं जगद्गुरुपरमेश्वरस्वरूपतया प्रतिपद्यत इति प्रतिपादितम्।

साम्बपञ्चाशिका

एष ग्रन्थो भगवतो वासुदेवस्य पुत्रेण श्रीसाम्बेन विरचितः। अस्मिन् लोकानुजिघृक्षया स्वात्मलक्षणस्य विवस्वतः स्तुतीरुपन्यस्यता ग्रन्थकारेणानेके तन्त्रसिद्धान्ताः स्पष्टं वर्णिताः। राजानकस्य श्रीक्षेमराजस्य गभीरया टीकया समुद्भासितोऽयं ग्रन्थो बह्वागमसिद्धान्तान् विवृण्वन् विपश्चितां महते मनस्तोषाय कल्पते। त्रिपञ्चाशत्संख्यैर्महाकार्यैः पद्यैर्ये विशिष्टा आगमविषया एतत्प्रबन्धाङ्गतां नीतास्तेषु कतिपये संक्षेपत इहोपन्यस्यन्ते।

प्रथमे पद्ये ब्रह्मणः प्रथमोन्मेषं शब्दब्रह्मरूपं प्रणवध्वनिमरुणतया, शब्दार्थात्मना तदीयविवर्तरूपं सर्वं जगत् तज्ज्योतीरूपतया, ऋग्यजुःसामस्वरूपां वेदत्रयीं तन्मण्डलरूपतया, सर्वविद्यानामास्पदत्वेन तदीयस्पन्दनतया च, षड्जादीन् सप्त स्वरान् सप्ताश्वरूपतया बोद्धृविग्रहगतं बोधस्थलं वियद्रूपतया च निर्वर्ण्य परब्रह्मणः परार्करूपतया सामान्यव्याप्त्या स्तुतिः कृता।

द्वितीयस्मिन् पद्ये 'ओम्' इति शब्दात्मकप्रणवरूपस्य परब्रह्मप्रथमोन्मेषस्य परावाणीरूपाया अकारादिक्षान्तशब्दसामान्यशरीरायाः पश्यन्तीवाचश्च प्रसारकत्वं प्रतिपाद्य देहे मध्यनाडीगतप्राणब्रह्मनिविष्टः परब्रह्मस्वरूपः परमादित्यो देहमध्यनाडीव्याप्त्या प्रपद्यमानतया स्तुतः।

तृतीयस्मिन् पद्ये स एक एव चिद्भानुस्त्वगादित्रयोदशकरणमूर्तितया, अहंकारस्य ग्राहककुक्षिनिक्षेपे त्वगादिबुद्ध्यन्तद्वादशकारणात्मना द्वादशादित्यतया, आन्तरस्य बाह्यस्य च जगतः प्रकाशनेन वेद्यैकरूपतया मृतकल्पानां देहादीनामण्डानां प्राणप्रदत्वेन मार्तण्डतया च विज्ञाप्य प्रपञ्चव्याप्त्या स्तुतः।

पञ्चमपद्ये परमादित्यस्य चैतन्यभानोर्ब्रह्मनाडीरूपाया मूर्तेर्देहे बहिः सर्वभूतेषु च व्याप्तिं प्राणादिजिष्णुयोगिजनप्राप्यत्वं च वदता प्राणादिकालुष्योपशमलक्षणा प्रसन्नता चिदानन्दघनतया स्फूर्तिमत्ता च समभ्यर्थिता।

षष्ठपद्ये चैतन्यभास्वतः परमादित्यरूपाया मूर्तेः सर्वत्र सर्वदाऽप्रतिहतपथतया, शीतोष्णयोरत्याधिक्यप्रतिषेधेन सदा समस्ततया, गतिमत्त्वेन सदैवाप्रमिततया, परमाह्लाददानेन निस्तापतया, शून्यतात्मना प्रमित्यनर्हत्वेन राहुग्रासरहिततया च

बाह्यार्कस्य मूर्तितो व्यतिरेकं कलिवञ्चकप्रसङ्गे विष्णुतनोरिव राजमानत्वं च निर्वर्ण्य तस्याश्चिदानन्दघनात्मना स्थितिलक्षणा श्वेतता सुप्रसन्नता च प्रार्थिता ।

अष्टमपद्ये चैतन्यभानोरक्षय्यं भूमस्वरूपं सोमकल्पस्य मेयवर्गस्योदयनिलयभूमित्वं वेदानां च ब्रह्मामृतमाक्षिकलग्नमधुकरीसङ्करूपत्वं च प्रदर्श्य प्रपद्यमानता वर्णिता ।

नवमपद्ये सूर्यस्य वामनस्य च प्रकाशेन पादेन च सर्वलोकक्रान्तिमिव चिदर्कस्य सर्वजगदात्मना उन्मेषलक्षणां विश्वव्याप्तिं विज्ञाप्य विश्वोत्कृष्टतया तस्य वर्तनमाकाङ्क्षितम् ।

दशमे पद्ये क्रमेण शाक्तस्य धाम्नो ध्यानं विधाय परविमर्शात्मानं नादं शाक्तरूपानुप्राणितं स्वात्मतयाऽन्तः साक्षात्कृत्य 'भूः स्वाहा' इत्यादिकाश्चतस्रो व्याहृतीः प्रणवोच्चारणपूर्वकमुच्चार्य शाक्तशाम्भवधाम्नोरवष्टम्भेनात्मनो व्युत्थानदशां तदभेदरसमयीं च सम्पाद्य वेदमातुः प्रतिपाद्यं चिदादित्यस्य सर्वोत्कृष्टं तेजः शरणीकृततया समुपदिष्टम् ।

एकादशे पद्ये चिदद्वयावबोधानुदयं यावत् प्रवर्तमानायाः सर्वविधभेदकल्पनात्मकाविद्याया विनाशार्थं स्तोतृस्तुत्यादिभेदकल्पनात्मिकाया अविद्यायाः साहाय्येन निर्वर्तमानस्य स्तुत्यादेरेव सम्पाद्यतां बाह्यप्राणार्करूपेण प्राणब्रह्मरूपेण विश्वात्मचिदानन्दघनरूपेण च चिदर्कस्यैव स्तोतव्यतां च प्रतिपादयता परमात्मोत्कर्षपरामर्शात्मिकया स्तुत्यैव परमसमावेशः सुलभ इति तत्त्वं निर्वर्णितम् ।

त्रयोदशे पद्ये चिद्भानुत एव सर्वविधाया वाचः प्रसरणेन तस्य तया गोचरीकरणस्य दुर्घटतया विधिमुखेन तन्निरूपणस्य दुःशकतां निषेधरूपेण च कथंचित् शक्यतां वदता 'तुभ्यं नम' इति वचोव्यतिरिक्तायाः स्तुतेर्वस्तुतोऽसम्भवं च ब्रुवता तदीयोऽमितो महिमा प्रकाशितः ।

त्रयोविंशे पद्ये मनोबुद्धीन्द्रियलक्षणान् सप्ताश्वान् पश्यन्तीवागाख्यमेकमात्रमश्वं चारूढस्य चिद्भानोरुपासनया स्वरगुणकलाप्रभृत्युपाधिलक्षणाश्वानारूढस्य निरुपाधिचिदानन्दघनस्य परमादित्यस्य प्रकाशलक्षणा प्राप्तिर्भवतीति तत्त्वमुपवर्णितम् ।

चतुर्विंशे पद्ये एकस्य चिद्भानोरेवान्नरूपतयाऽन्नदरूपतयाऽन्नादरूपतया च वर्णनं विदधता स एव वेद्यवेदनवेदितृभावेन प्रसरतीति न किञ्चित् ततो व्यतिरिक्तम् , स एव सर्वस्य जगत आत्मेति विशदीकृतम् ।

पञ्चविंशे पद्ये प्राणापानयोरग्नीषोमप्रभृतितत्तद्युग्मयोः कार्यकारितया तत्तदुभयात्मकतां प्रदर्श्य उदानधाम्नि तस्य तस्य युग्मजातस्य विलापनेन चिदात्मधाम्नि अवस्थित्या चिदाख्यस्य परमादित्यस्य प्राप्तिर्भवतीति स्पष्टीकृतम् ।

षड्विंशे पद्ये श्लेषमहिम्ना भौतिकेन भानुना चिदात्मकस्य भानोः सादृश्यं वर्णयता तस्य स्वगर्भतो विश्वप्रसवाय अग्नीषोमाधिरूढत्वं क्रमेण प्रवर्तमानैर्विचित्रै-रुन्मेषनिमेषैरसामान्यस्य शाक्तानन्दरसस्यास्वादनलम्पटत्वं चाभिहितम् ।

सप्तविंशे पद्येऽयमर्थोऽभिहितो यद् यथा बाह्यः सूर्यः स्वरश्मिभिः सोमं द्रुतं कृत्वा तदीयपञ्चदशकलाभिर्देवनराद्यात्मकं जगत् तर्पयन् अमाख्यया षोडश्या कलया ब्रह्माण्डोदरे स्वात्मयागं करोति, तथैव चित्सूर्योऽप्यात्मनः शाक्तेन तेजसा मेयजातरूपं सोमात्मकं हविर्निष्पाद्य तेन ब्रह्माद्यनाश्रितान्तकारणेष्वधिष्ठितं धरादि-शिवतत्त्वान्ताध्वमयं जगत् तर्पयन् ऊर्ध्वतुर्यार्धसंज्ञिकाममारूपां कलां कवल-यन्नात्मयागं विधत्ते ।

त्रिंशे पद्ये चिदादित्यस्य प्रथमोन्मेषादिरूपै रश्मिभिर्जगद् विकास्यते, चरम-निमेषादिभिश्च तैस्तदखिलं चिदेकमयतां नीयत इति न्यरूपि ।

द्वात्रिंशे पद्ये चिदादित्यात् प्रकटितः सम्पूर्णः प्रपञ्चस्तदात्मक एव, अहंत्वे-नात्मानमनुभवन् सर्वो देही तदिच्छया प्रापितग्रहीतृत्वादिभावतया संकुचितज्ञान-शक्तित्वेनाज्ञतां गतः साधनया सर्वोपाधिविगलने पर्यन्ते तदेकात्मतामेवापद्यत इत्युक्तम् ।

त्रयस्त्रिंशे पद्येऽज्ञोऽपि जनश्चिदर्कस्य परामर्शात्मना संस्तवेन पश्चिमे जन्मनि पूर्वाखिलजन्मार्जिते पुण्यपापे विधूय शिवत्वलाभे जातस्पृहो भक्तिश्रद्धायुतो लब्धदीक्षः साधनारतो मुक्तिलाभे सफलो भवतीत्यभिव्यञ्जितम् ।

षट्त्रिंशे पद्ये साधकस्य चेतसि चिदर्कोदयेन रागादिलक्षणस्य तमसो निवृत्त्याऽन्तर्मुखतां प्राप्ताऽपि तदीया मतिश्चिदैक्याज्ञानलक्षणां निद्रां तावन्न त्यजति यावच्चित्सूर्यः स्वगाढज्योतिषा तां नाश्लिष्यतीति साधनधियः पूर्णं जागरणं तत्कृपैकायत्तमित्यसूचि ।

सप्तत्रिंशे पद्येऽयमर्थः प्रत्यपादि यद् यथा बाह्यः सूर्यः स्वोदयेन जगत्तिमिरं तिरस्कृत्यापि निशादिनविभागेन तमो जीवयन् सर्वथा तन्न निःशेषयति, तथैव चित्सूर्यः साधकस्य चित्ते समुदितस्तदीयं तमो निरस्यापि व्युत्थानदशायां पुनस्तं क्लेशतमसा कलुषयति, अतो निर्व्युत्थानसमावेशरसास्वादोदयपर्यन्तं चिदर्कं स्तुवतैव वर्तितव्यं साधकेन ।

अष्टत्रिंशादिपञ्चाशत्तमान्तपद्यैर्विविधप्रकारैश्चिदर्कं दयोदकवर्षणाय साधकेन प्रार्थनीयतया प्रतिपाद्य चरमेण श्लोकत्रयेण सर्वं निरुक्तं निष्कृषता भक्तिभाजे जनाय भोगमोक्षप्रदानार्थं भगवांश्चैतन्यभानुरभ्यर्थितः ।

त्रिपुरामहिमस्तोत्रम्

एष स्तोत्रात्मक आगमग्रन्थोऽनसूयातनूभवेन क्रोधमूर्तिना शिवात्मना महामुनिदुर्वाससा रचितः । 'श्रीमातस्त्रिपुरे' इत्यादि 'सदसदनुग्रह' इत्याद्यन्तपद्-

पञ्चाशत्पद्येषु परिसमाप्तेऽस्मिन् ग्रन्थे त्रिपुरसुन्दर्याः स्तोत्रमिषेणानेकानि तन्त्रविद्या-रहस्यानि संकेतितानि सन्ति ।

प्रथमेन पद्येन वाग्भव-कामराज-कामकलाभिधकूटत्रयदेवतानां भावना-मुक्त्वा द्वितीयेन च ब्रह्मरन्ध्रस्थितसहस्रदलकमलकर्णिकान्तर्गतत्रिकोणात्मकसिंहासन-स्थितां चिद्रूपां त्रिपुरसुन्दरीं स्तुत्वा तृतीयादिद्वादशान्तश्लोकैः संकेतसारविद्यायाः बालाविद्यायाश्च वाग्भवादिबीजत्रयं वर्णयता त्रयोदशचतुर्दशपद्याभ्यां तज्ज्ञानलभ्यं सामर्थ्यं प्रतिपादितम् ।

पञ्चदशेन पद्येन सदाशिवोक्तनित्योपासनाया अवश्यकर्तव्यता, षोडशेन सुकवित्वलाभायाधीतानेकशास्त्रस्यापि त्रिपुरसुन्दर्या अनिवार्योपास्यता, सप्तदशेन देव्युपासकस्यानिष्टप्रदानामपीष्टप्रदत्वेन परिणामिता, अष्टादशेन त्रिपुरेति नाम्नः कलनमात्रेण मानवस्य धन्यता चेत्यभिधाय एकोनविंशेन मूलाधारहृदयभ्रूमध्यवर्तिनः कूटत्रयस्य प्रणवरूपता प्रत्यपादि ।

विंशैकविंशपद्याभ्यां त्रिपुरसुन्दर्या गायत्र्यादीनामधिदेवतात्वं कोशपञ्चकद्वारा भगवत्या विश्वशरीरे विलीनत्वं तज्ज्ञातुर्ब्रह्मज्ञत्वं च ब्रुवता द्वाविंशेन पद्येनागम-रहस्यज्ञानाय सद्गुरुतो दीक्षाग्रहणस्यावश्यकतोपदिष्टा ।

शैववैष्णवसौरप्रभृत्यनेकेषु स्वल्पायाससुलभेषु मुक्तिमार्गेषु सत्स्वपि न्यास-पूजादिविस्तारेण दुर्गमोऽपि त्रिपुराराधनमार्गोऽज्ञानतमसोऽपुनर्भवनिवृत्तये नूनमनु-सरणीय इति त्रयोविंशेन पद्येनाभिधाय त्रिपुरसुन्दर्या आराधनं विना केवलमुपनिष-द्रीत्याऽऽत्मनः श्रवणादिसाधनमात्रेण जननमरणप्रदेभ्यस्तद्विलासभूतविविधभोग्य-दिव्यायुधेभ्यो मनुष्यस्य त्राणं न भवितुमर्हतीति चतुर्विंशेन वदता संसारसमुद्रे मग्नानां प्राणिनामुद्धाराय भगवती पराम्बैव पञ्चविंशेन प्रार्थिता ।

षड्विंशेन पद्येन व्रतयागादिभिः साधकस्य शारीरः क्लेश एव वर्धते मुक्ति-पदं तु दूरतरमेव तिष्ठति, तत्तु मातुराराधनेनैव साध्यमित्यभिधाय सप्तविंशेन सकल-मातृकामूलभूताया अकारहकाररूपायाः परस्याः शक्तेः, अष्टाविंशेन च सदैवतस्य श्रीचक्रस्य स्तुतिः कृता ।

एकोनत्रिंशादिपद्यैरान्तं नानाप्रकारैर्भगवत्याः स्तवव्याजेन बहूनि तान्त्रिक-तत्त्वानि शंसता महात्रिपुरसुन्दर्या उपासनाया ऐहिकामुष्मिकसमृद्धिलाभेन सह मोक्षलाभस्य सुघटत्वमुक्तम् ।

स्पन्दप्रदीपिका

ग्रन्थोऽयमागमशास्त्रगुरुणा तत्रभवता उत्पलाचार्येण प्रणीतः । अस्मिन् भट्ट-कल्लटेन गुरोर्वसुगुप्तात् प्राप्तस्य आगमरहस्यस्य शिष्याणामवबोधायानुष्टुप्पञ्चाशिकया संगृहीतस्य विशदं व्याख्यानं कृतमस्ति । स्पन्दपदव्यपदेश्य आत्मा मायातमःस्तोमे-

नाच्छन्नतया न प्रकाशतेऽतस्तत्प्रकाशनाय कृतोऽयं ग्रन्थः 'स्पन्दप्रदीपिका' इत्यन्वर्थनाम्ना स्थाने चकास्ति ।

ग्रन्थेऽस्मिन् तन्त्रशास्त्रस्य शास्त्रान्तराणां च बहून् ग्रन्थानुद्धृत्य स्पन्दकारिकाणां प्रतिपाद्यमर्थजातं तैः संवादयता सुस्पष्टयता च स्पन्दतत्त्वं निपुणतया निरूपितम् । अस्य ग्रन्थस्य सम्पर्कमागतोऽध्येता नूनमागममहोदधेरन्तःप्रवेशमासाद्य तन्त्रशास्त्राणां मर्मज्ञतां लभमानः कृतार्थो भवितुमर्हतीति निर्विवादम् ।

ग्रन्थस्यास्य भाषादृशा सुगमतया तद्विषयविस्फोरणं संक्षिप्तादपि प्रयासाद् विरमता मयाऽध्येतारस्तदध्ययने स्वतः प्रवृत्ता दिदृक्ष्यन्ते ।

अनुभवसूत्रम्

अनुभवसूत्रनामाऽयं ग्रन्थो महात्मना मायिदेवेन शिवोक्तस्य 'वातुल'-महातन्त्रस्योत्तरभागाङ्गभावेन रचितोऽधिकरणाष्टकोपेतः शिवसिद्धान्ततन्त्राख्यया-ऽवद्योतते ।

अस्य प्रथममधिकरणं 'पारम्पर्यक्रम'नाम्ना, द्वितीयं 'स्थलनिर्देश'नाम्ना, तृतीयं 'लिङ्गस्थलनिरूपण'नाम्ना, चतुर्थं 'मङ्गस्थलनिरूपण'नाम्ना, पञ्चमं 'लिङ्गाङ्ग-संयोगविधि'नाम्ना, षष्ठं 'सर्वाङ्गलिङ्गसाहित्य'नाम्ना, सप्तमं 'श्रीलिङ्गार्पणसद्भाव'-नाम्ना, अष्टमं च 'क्रियाविश्रान्ति'नाम्ना व्यवह्रियते ।

प्रथमेऽधिकरणे ऐपुर्यां सोमनाथप्रसादेन साक्षाद् विष्णोः प्रादुर्भूतादादिगुरो-रुपमन्योरारभ्य प्रकृतग्रन्थकर्तृमायिदेवपर्यन्तमाचार्यपरम्परायाः क्रमो वर्णितः ।

द्वितीयेऽधिकरणे सच्चिदानन्दलक्षणस्य परब्रह्मात्मनः शिवतत्त्वस्य विश्वस्थिति-लयाधारतया स्थलत्वं समर्थ्य शिवस्य लिङ्गस्थलत्वं जीवस्य च अङ्गस्थलत्वं निर्दि-शता लिङ्गाङ्गयोरैक्यज्ञानादज्ञानग्रन्थिभङ्गे जीवस्य शिवतत्त्वलाभो भवतीत्युक्तम् ।

तृतीयेऽधिकरणे चराचरात्मकस्य सर्वस्य जगतो लयगत्योराश्रयतया शिवस्य लिङ्गत्वं निरूप्य भाव-प्राण-इष्टनाम्ना त्रैविध्येन स्थितस्य लिङ्गस्य बिन्दुनाद-कलाभेदेन षोढात्वं चित्-परा-आदि-इच्छा-ज्ञान-क्रियानामभिः शक्तिषाड्विध्यं च वर्णयता शक्तियुक्तानां स्थलानां स्वरूपलक्षणवर्णनपूर्वकं विशदाद् विस्तृताच्च लिङ्ग-ज्ञानाज्ज्ञातुः शिवत्वसौलभ्यमभिहितम् ।

चतुर्थेऽधिकरणे अं=परं ब्रह्म प्रति गमनाद् जीवोऽङ्गमुच्यत इत्युक्त्वा योग-भोग-त्यागनाम्ना तस्य त्रैविध्यं पृथगर्थतया प्रत्येकं द्वैविध्यसिद्ध्या षाड्विध्यं च वर्णयता समरसा, आनन्दाकारा, अनुभवाकारा, परमा, अवधानात्मिका, नैष्ठिकी चेति षड्विधां भक्तिं निरूप्यान्ते अङ्गस्थलज्ञानस्य शिवाद्वैतलाभानुगुणत्व-मुक्तम् ।

पञ्चमेऽधिकरणे शिवात्मकस्य लिङ्गस्य जीवात्मकस्य चाङ्गस्य सम्यग् योगलक्षणः संयोगस्तद्विधिश्च वर्णितः। अमी लिङ्गाङ्गसंयोगा अस्मिन्नधिकरणे बहुधा निरूपिताः, यथा 'तत्त्वमसि' इति वाक्ये तत्पदार्थो लिङ्गम्, त्वंपदार्थोऽङ्गम्, असिपदार्थः संयोगः, सच्चिदानन्दे सन्मात्रं लिङ्गम्, चिन्मात्रमङ्गम्, आनन्दमात्रं तयोः संयोगः, नादो लिङ्गं बिन्दुरङ्गम्, कला संयोगः, मन्त्रो लिङ्गम्, क्रिया अङ्गम्, तयोः प्रयोगः संयोगः, पुरुषो लिङ्गम्, प्रकृतिरङ्गम्, तयोः प्रेरकत्वेन स्थित ईश्वरः संयोगः, अकारो लिङ्गम्, उकारोऽङ्गम्, मकारः संयोग इत्येवमादिः। यया लिङ्गसम्बन्धो दीयते मलत्रयं च क्षीयते सा दीक्षा, सा च वेधात्मिका, मन्त्रात्मिका, क्रियात्मिका चेति त्रिधा, ताभिरुपपन्नः परमया भक्त्या सम्पन्नश्च साधको मलत्रयं दग्ध्वा समीचा लिङ्गाङ्गसंयोगेन कृतार्थतामात्मनो निर्वर्तयतीति निरूपितम्।

षष्ठेऽधिकरणे एकमेव लिङ्गं शक्तिभेदेन नानात्वमुपगतं भक्तिभेदभिन्नेषु बहुषु जीवाङ्गेषु गुरूपदेशेन प्रतिष्ठामवाप्य निरन्तरं प्रकाशमानं सर्वाङ्गलिङ्गसाहित्यरूपत्वेन वर्णयित्वा मध्ये तदेव विविधैः प्रकारैः परिस्फुटयता अन्ते पञ्चाक्षरषडक्षरयोः शिवमन्त्रयोस्तन्त्रसम्मतोऽर्थः प्रणिगदितः।

सप्तमेऽधिकरणे सर्वाः क्रियाः कुर्वतोऽपि निर्लेपत्वाधायकः श्रीलिङ्गार्पणसद्भावो वर्णितः। तच्चार्पणं क्रियार्पणज्ञानार्पणभेदेन द्विधा निरूप्यान्येऽप्यनेके विषया विशदमावेदिताः।

अष्टमेऽधिकरणे क्रिया लिङ्गे समर्पणं प्राप्य विश्रान्तिं लभन्ते, बन्धनौपयिकं फलं न प्रसुवत इत्येवंविधां क्रियाविश्रान्तिं निरूपयता निष्कामभावेन शिवार्पणधिया क्रियमाणाः कर्मज्ञानभक्तयः पुंवन्ध्ययोः सङ्गम इव फलाय न कल्पन्त इत्यादिरर्थः प्रत्यपादि।

वातुलशुद्धाख्यं तन्त्रम्

अस्मिन् ग्रन्थे स्कन्दं मोक्षदं शिवज्ञानमुपदिशता श्रीकण्ठेन दध्नो घृतमिव सहस्रागमग्रन्थतस्तत्त्वसारः समुद्धृत्य सञ्चितः। पटलदशकात्मना विततोऽयं तन्त्रग्रन्थः प्रथमेन पटलेन तत्त्वभेदम्, द्वितीयपटलेन तृतीयपटलेन च चक्रभेदम्, चतुर्थपटलेन वर्णभेदम्, पञ्चमपटलेन मन्त्रभेदम्, षष्ठपटलेन प्रणवभेदम्, सप्तमपटलेन ब्रह्मभेदम्, अष्टमेन अङ्गभेदम्, नवमेन मन्त्रजातम्, दशमपटलेन च मन्त्रकीलं वर्णयन् तान्त्रिकाय ज्ञानाय तान्त्रिक्यै सिद्धयै च सोत्कण्ठानां निरुपमः सहायकः।

तदेवमेनं संग्रहग्रन्थं सुसम्पाद्य प्रकाशार्हतां नयतो योगतन्त्रविभागस्याध्यापकाननुसन्धातॄन् सहयोगिनश्च धन्यवादैः सभाजयन् विरमति विस्तराद्।

चैत्रशुद्धप्रतिपत्, सं० २०२७
वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयः
वाराणसी।

बदरीनाथशुक्लः
अनुसन्धानसंचालकः
७–४–७०

विषयानुक्रमणी

विरूपाक्षपञ्चाशिकायाः

साम्बपञ्चाशिकायाः

त्रिपुरामहिमस्तोत्रस्य

स्पन्दप्रदीपिकायाः

अनुभवसूत्रम्

प्रथमाधिकरणे

द्वितीयाधिकरणे

तृतीयाधिकरणे

चतुर्थाधिकरणे

पञ्चमाधिकरणे

षष्ठाधिकरणे

सप्तमाधिकरणे

अष्टमाधिकरणे

वातुलशुद्धाख्यतन्त्रस्य

प्रथमः पटलः

द्वितीयः पटलः

तृतीयः पटलः

चतुर्थः पटलः

पञ्चमः पटलः

षष्ठः पटलः

सप्तमः पटलः

अष्टमः पटलः

नवमः पटलः

दशमः पटलः

योगतन्त्र-ग्रन्थमाला
(४)

प्रधानसम्पादकः
बदरीनाथशुक्लः
सञ्चालकः
अनुसन्धानसंस्थानम्
वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी ।

तन्त्रसंग्रहः

[द्वितीयो भागः]

निर्वाणतन्त्रम्, तोडलतन्त्रम्, कामधेनुतन्त्रम्,
फेत्कारिणीतन्त्रम्, ज्ञानसंकलिनीतन्त्रम्,
सवृत्तिको देवीकालोत्तरागमश्च

सम्पादकः
म० म० प० गोपीनाथकविराजमहोदयः
योगतन्त्रविभागाध्यक्षः
वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी ।

वाराणस्याम्
१८९२ तमे शकाब्दे

आद्यं निवेदनम्

वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य योगतन्त्रविभागो विपश्चिदपश्चिमानां साधनामयजीवनानां महामहोपाध्यायश्रीगोपीनाथकविराजमहोदयानामाध्यक्ष्ये प्रवर्तमानो महनीयानां सुदुर्लभानां तन्त्रग्रन्थानामन्वेषणे सम्पादने परिशीलने च प्रारम्भादेव बद्धपरिकरः स्वकीयैरध्यापकैरनुसन्धातृभिश्च श्रमनिष्ठापूर्णेन सहयोगेन संवर्ध्यमानो निजेन शैक्षिककर्मणा विद्वन्निवहमानन्दतुन्दिलमानसं सम्पादयन् विभ्राजते । तस्यास्य महताऽध्यवसायेनोपलब्धस्य तन्त्रषट्कस्य प्रस्तुतं संग्रहं मुद्रणप्रकाशनाभ्यां पण्डितजनेभ्यः सुलभीकुर्वतो विश्वविद्यालयस्यास्य पक्षेण विभागस्य सर्वान् सदस्यान् हार्दिकैर्धन्यवादैः सम्मानयता मया विदुषां पुरत उपनीयमानस्य संग्रहस्यास्य विग्रहगतानां तन्त्राणां संक्षिप्तो विषयपरिचयस्तेषामीषन्मनोविनोदार्थमत्र समुपन्यस्यते ।

संग्रहेऽस्मिन् षट्तन्त्राणि समावेशितानि—निर्वाणतन्त्रम्, तोडलतन्त्रम्, कामधेनुतन्त्रम्, फेत्कारिणीतन्त्रम्, ज्ञानसंकलिनीतन्त्रम् देवीकालोत्तरागमश्च ।

निर्वाणतन्त्रम्

इदं तन्त्रं चण्डिकाशिवसंवादात्मकं पञ्चदशसु पटलेषु विततमास्ते । तत्र प्रथमे पटले ब्रह्माण्डानामुत्पत्तेः शिवशक्तिविभागेन सृष्टिकल्पनायाश्च मूलभूतं ब्रह्मतत्त्वं निरूपितम् ।

द्वितीयपटले सृष्टेरुद्भवक्रमः, जीवनस्य जन्ममृत्युप्रकारः, मरणोत्तर पिण्डदानस्य सम्भवः, वर्णभेदेन मोक्षस्वरूपभेद इत्यादिको विषयो वर्णितः ।

तृतीयपटले प्रकृतितो जगतो जन्मलयौ, सर्वे द्विजाः शाक्ता एव, गायत्र्याः स्वरूपं भेदश्च, तदुपासनायाः फलम्, तुरीये धाम्नि स्थिताय परमेश्वराय बहिर्नमस्कारस्योपपत्तिः, भस्म-रक्तांशुक-दण्ड-त्रिशूलानि दधतो दर्शने सति सद्य एव तन्नमस्कारस्यानिवार्यतेत्यादिरूपा विषया वर्णिताः ।

चतुर्थपटले संन्यासिनम्, अवधूतम्, ब्रह्मचारिणम्, गृहस्थं च निर्वर्ण्य पातालसमुद्रकुलाचलानां निरूपणं कृतम् ।

पञ्चमे पटले वैकुण्ठलोकः, गोलोकः, राधिका, मुरलीधरः, वेदगानविधिः, राधिकाकृष्णयोरुपासना तत्फलं चैवमादयो विषया निरूपिताः ।

षष्ठे पटले रुद्रालयः, रुद्रः, भद्रकाली, काल्या आराधनयैव विष्णोर्लोकपालकस्य सामर्थ्याधिकारयोः प्राप्तिरित्यादिविषयजातं प्रतिपादितम् ।

सप्तमे पटले भूर्भुवःस्वर्लोकेषु ब्रह्मविष्णुशम्भूनां निवासं महर्लोकं च मुख्यतया निर्वर्ण्य भुवनेशीसम्पर्करहितस्य शिवस्य पङ्गुत्वं वदता तदाराधनयैव तस्येश्वरत्वसम्पत्तिः, सैव विविधे विश्वरूपे प्रसरन्ती भोगमोक्षयोर्दात्रीत्यादिरर्थः स्फुटीकृतः ।

अष्टमे पटले गौर्याः शम्भोश्च स्वरूपं निवासस्थानं च निरूप्य गौरीसंसर्गाल्लब्धमहिमैव महेश्वरः सृष्टिनिर्माणादौ प्रभवतीत्यभिहितम् ।

नवमे पटले तपोलोकं प्राधान्येन प्रतिपाद्य शब्दब्रह्मस्वरूपाणां वेदपुराणप्रभृतीनां पाठस्य महाफलत्वं मोक्षप्रदत्वं च प्रण्यगादि ।

दशमे पटले सत्यलोकं प्रतिपाद्य महाकाल्या एव शम्भुप्रभृतीनां देवानामन्यस्य च सर्वस्य वेदजातस्य प्रादुर्भावः । शिवः स्वर्गप्रदो निर्वाणदा तु काली एवेत्यादिविषया वर्णिताः ।

एकादशे पटले देव्यास्तत्त्वनिरूपणायातितरामाग्रहीतेन शङ्करेण पञ्चमकारात्मकं तत्त्वपञ्चकमुपदिष्टम् । पञ्चमकाराश्च मद्यमांसमत्स्यमुद्रामैथुनरूपाः, तत्सेवयैव साधकस्य मुक्तिलाभः, दिव्यभावयुताः साधकास्तत्त्वज्ञानाद् वीरभावयुताश्च तत्त्वसेवनात् सिद्धिं लभन्ते । एभिः पञ्चतत्त्वैः क्रियमाणा श्रीचक्रपूजा सर्वकामेभ्यः कल्पद्रुमायते । पञ्चतत्त्वोपासनायां पुरुषस्य सहयोगं कुर्वती नारी कालिकाभावं पुरुषाश्च शङ्करभावं प्राप्नुवन्तीत्यादि प्रत्यपादि ।

द्वादशे पटले गुरुमन्त्रवर्णभेदभिन्नं तत्त्वत्रयं निपुणं निरूप्य एतत्तत्त्वत्रयविदो विष्णुलोके निवासस्य यममन्दिरेऽप्रवेशस्य पर्यन्तेऽमरत्वस्य च प्राप्तिर्भवतीत्युपवर्णितम् ।

त्रयोदशे पटले दशार्णमन्त्रम्—"मायाबीजं वधूबीजं लक्ष्मी काली च पाशकम् । गगनं पक्षिबीजं च वह्निकान्तां ततः प्रिये ॥" इत्येवं समुपदिश्य तस्य श्रवणं विधेयतया जपनं च त्याज्यतया प्रतिपादयता मुक्तये गृहीतसन्न्यासस्य नारायणरूपता, दारपुत्राद्यभाव एव सन्न्यासस्य ग्रहणीयता, सन्न्यासिनो गृहस्थेन सर्वथा परिपूजनीयता चैवमादयो विषया विशदीकृताः ।

चतुर्दशे पटले अवधूतस्य स्वरूपम्, तस्य शम्भुभावेन पूज्यता, तत्पूजया काल्यास्तुष्टिः, गृहस्थस्य लक्षणं कर्तव्यं चेत्येवमादयो विषया विस्पष्टं वर्णिताः ।

पञ्चदशे पटले पञ्चाक्षरस्य षडक्षरस्य वा मन्त्रस्य जपविधानम्, पार्थिवस्य लिङ्गस्य पूजनविधिः, निषिद्धकर्मणां त्यागः, शिवपूजोत्तरमेव शक्तिपूजा, शिवपूजातः पूर्वं देवान्तरपूजाया वैफल्यमित्याद्यर्थजातं निरूपितम् ।

तोडलतन्त्रम्

इदं तन्त्रं दशसु पटलेषु प्रसृतम् । प्रथमे पटले कस्या महाविद्यायाः सन्निधौ किमाकारो महादेवः पूज्य इति विस्तरेण वर्णयित्वा हृत्कमले स्थितायाः काल्याः सञ्जिहीर्षया व्यक्तभावाश्रयणे शिवो निर्माणरक्षणानुगुणशक्त्योरभिभवेन शवतां प्रतिपद्यते, तदीयं हृदयमारूढा च काली शववाहनतामापद्यत इत्युक्तम् ।

द्वितीयपटले योगसारनिरूपणसन्दर्भे स्वर्गपातालादिकं निरूप्य देहगतमिडापिङ्गलासुषुम्णानामकं नाडीत्रयम्, साधारं चक्रषट्कम्, तदाश्रितदेवतातर्पणविधिः योनिमुद्रासनम्, तदासनसिद्धया मोक्षलाभ इत्यादिकं विशदीकृतम् ।

तृतीयपटले कालिकाया मन्त्राः, तस्या अष्टौ भेदाः अष्टौ मन्त्राः, विद्याया भेदाः, कालिकाया आराधनविधिः, एवमादयो विषयाः स्पष्टमुट्टङ्किताः ।

चतुर्थपटले ताराया बाह्यपूजाविधिर्विस्तरेणोपन्यस्तः ।

पञ्चमे पटले पार्थिवशिवपूजनं सविधि सम्यगुपदिष्टम् ।

षष्ठे पटले महाकालिकामन्त्रः, तारिणीमन्त्रः, पञ्चाक्षरीप्रभृतयो विद्या एवमादयोऽर्थाः प्रतिपादिताः ।

सप्तमे पटले सप्तद्वीपा वसुन्धरा, तदाधारः, साधारं समुद्रसप्तकम्, मानवादीनामाधारो मारुतस्य मानम्, इत्येवमादयो विषया वर्णिताः ।

अष्टमे पटले सार्धत्रिकोटिनाडीभिरुपेतं मानवशरीरम्, बिन्दुमानम्, लिङ्गच्छिद्राकर्षणेन कुण्डल्या अवस्थानमितीमे विषयाः प्रतिपादिताः ।

नवमे पटले नवार्णवासना, दीर्घायुष्योपायः, कुण्डल्या मालाकारताप्रकारः, विभिन्नासु मालासु जपस्य पद्धतिः फलं चैवमादयो विषया निरूपिताः ।

दशमे पटले काकीचञ्चुनाम्नी महामुद्रा, देव्या दशावताराश्च प्रतिपादिताः ।

कामधेनुतन्त्रम्

तन्त्रमिदं चतुर्विंशतिपटलेषु विततं देवदेवीसंवादात्मकं बहूनां तान्त्रिकरहस्यानामावेदकम् । अस्मिन् तन्त्रे पञ्चाशद्वर्णात्मकं तत्त्वम्, मातृकाजपस्य विधिः, मातृकाया युवतीत्वम्, विविधमन्त्राणां जपप्रकारः, मन्त्रस्य जीवत्वसाधनविधिः, बीजध्यानम्, मन्त्रबीजभावना, मन्त्रवर्णध्यानम्, बीजाद् रामादीनामुद्भवः, शिवत्वापादिका योगसाधना, वकारतत्त्वम्, सर्ववर्णभावनासाधिका ककारभावना, वर्णज्ञानाभावे जपस्य वैफल्यम्, जनमोहनं तिलकम्, हृत्तत्त्वम्,

तत्र स्वविद्याभावनम्, मन्त्रविक्रयिणो निन्दा, पञ्चाशद्वर्णसंकेताः, मातृकापूजां विना इष्टविद्याजपाद् हानिः, सन्दीपनी विद्या, तदज्ञाने कृत्स्नस्य कर्मणो नैरर्थक्यम्, मातृकापूजया पुरुषो दिव्यभावने वीरभावने च सम्पन्नो धनी गुणी च जायते, नवतत्त्वयुतस्य मन्त्रस्य जपेन विष्णुतुल्यतालाभः, कामिनीध्यानसम्पुटितबीजोच्चारणात् शिवशक्तिमयत्वलाभः, निद्राभङ्गोपायः, कामिनीध्यानोत्तरं तुरीयकूटोच्चारणाद् विनिद्रतालाभः, शूद्रलिखितपटलस्य जपायोग्यत्वम्, कामधेनुमन्त्रस्तज्जपफलम्, बीजतत्त्वम्, कामिनीतत्त्वम्, ज्योतिस्तत्त्वम्, कामिनीजीवनतत्त्वम्, समर्पणपूर्वकमेव जपानुष्ठानम्, चन्द्रसूर्योपरागे कामिनीजपात् सिद्धिलाभः, सूर्यपर्वचन्द्रपर्वणोर्निरीक्षणस्य कर्तव्यता, एवमादयो विषया वर्णिताः।

फेत्कारिणीतन्त्रम्

इदं तन्त्रमेकविंशतिपटलेषु विततं विद्यते। अस्मिन् पञ्चाशद्वर्णात्मकमातृकायाः परमेश्वरीत्वं तत एव च चराचरात्मकस्य सम्पूर्णस्य जगतः प्रादुर्भावः, शान्तिकादिकर्मानुरूपाणि कुण्डानि, स्रुक्प्रभृतीनि होमसाधनानि, प्राणायामस्य विधिः, विविधा अङ्गादिन्यासाः, स्तम्भनोच्चाटनमारणादीनां दारुणकर्मणां मन्त्राः, नानाप्रकारा मुद्राः, विविधाभिचारिककर्मानुरूपा मालाभेदाः, विभिन्नेषु रौद्रकर्मसु जपस्य विधिसंख्याहोमसाधनद्रव्यादयः, विभिन्नाभिचारिककर्मानुष्ठानयोग्यानि श्मशानादीनि स्थलानि, मोहनवशीकरणाद्यनुगुणानि जपादीनि कर्माणि, कुक्कुटेश्वर-मातङ्गी-उच्छिष्टचाण्डालिनी-धूमावती-गृध्रकर्णा-भद्रकाली-श्मशानकालिका-एकजटा-महाकाली-जयदुर्गा-ज्वालामुखी-जातवेदाद्यादीनां नवदुर्गाप्रभृतिदेवानां च ध्यानपूजनादिकम्, लवणमन्त्रः, सिद्धियन्त्रम्, मन्त्रसंस्कारा एवमादयोऽनेके रहस्यात्मकास्तन्त्रविषया हृद्यैरनवद्यैः पद्यैरुपवर्णिताः सन्ति।

ज्ञानसंकलिनीतन्त्रम्

अस्मिन् तन्त्रे देवीं प्रति सृष्टेः स्वरूपम्, तस्या उदयप्रलयौ, ब्रह्मज्ञानम्, ततः सृष्ट्यादेरुपरम इत्यादिविषयान् ब्रुवता शिवेन ओङ्कारात् सर्वविद्यानामुद्भवः वेदादिविद्यानां गणिकात्वं तन्त्रविद्यायाः कुलवधूत्वम्, सर्वविद्या-सर्वदेवता-सर्वतीर्थानां च मानवदेह एवावस्थानम्, इडा-पिङ्गला-सुषुम्णारूपाणां गङ्गायमुनासरस्वतीनां सङ्गमस्थानत्वेन मनुष्यदेहस्य तीर्थराजत्वम्, खेचरी मुद्रा, शाम्भवी विद्या, अध्यात्मविद्या, पञ्च भूतानि, पञ्चविंशतिर्गुणाः, मानवदेहात्मनः-पिण्डस्य ब्रह्माण्डता, सप्त धातवः आत्मान्तरात्मपरमात्मनां लक्षणानि, मनस एव बन्धमोक्षमूलत्वम्, जीवस्य शिवत्वप्राप्त्युपाय एवमादयो विषया विनिरूपिताः।

देवीकालोत्तरागमः

एष आगमः परमेश्वरेण पार्वतीं प्रति प्रकाशितः, अस्य प्रधानतया प्रतिपाद्यो विषयः कालोत्तरः। स च—

निर्ममः करुणोपेतः सर्वभूताभयप्रदः।
भजेत् कालोत्तरं देवि मुमुक्षुर्योगतत्परः ॥ ५ ॥

इति पद्येन मुमुक्षुजनभजनीयतया निर्दिष्टः। वृत्तौ चास्य तत्रभवता निरञ्जनसिद्धेन कालोत्तरशब्दः "कालस्य चित्तचलनकालस्य, उत्तरम् उपरिभूतम्" इति व्युत्पत्त्या चेतसो नैश्चल्ये समुद्भूतस्य निर्विकल्पकज्ञानस्य बोधकतया व्याख्यातः।

आगमेऽस्मिन् मोक्षस्य साधनं ज्ञानं निरूपयता परमेश्वरेण चेतसश्चाञ्चल्यं विषयाभिमुखप्रवहमानतारूपं संसारनिदानत्वेन परित्याज्यतया तस्य नैश्चल्यं विषयेभ्योऽपकृष्य ज्ञातव्ये स्वाभिन्ने भगवति शिवे सन्निवेशनात्मक मोक्षहेतुत्वेनार्जनीयतया च—

चित्ते चलति संसारो निश्चले मोक्ष एव च।
तस्माच्चित्तं स्थिरं कुर्यात् प्रज्ञया परया बुधः ॥१०॥

× × ×

तदेव जन्मसाफल्यं पाण्डित्यमिदमेव च।
चलद्वायुसमं चित्तं निश्चलं ध्रियते हि यत् ॥३७॥

\+ × ×

अहमेव परं ब्रह्म जगन्नाथो महेश्वरः।
इति स्यान्निश्चितो मुक्तो बद्धः स्यादन्यथा पुमान् ॥५०॥

इत्येवमादिभिः पद्यैः प्रतिपादितम्।

मोक्षसाधनस्याचारस्य वर्णनप्रसङ्गे लौकिकस्य शास्त्रान्तरीयस्य च स्नानजपपूजादेः पितृक्रियातीर्थयात्रादेः काष्ठपाषाणपूजनप्रभृतेः क्षुद्रकर्मणः परित्याज्यत्वम्. मित्रामित्रयोर्लोष्टकाञ्चनयोः समदर्शित्वस्य, सर्वभूतेषु समत्वभावनस्य, पैशुन्यप्रभृतिदोषाणां निरसनस्य चार्जनीयत्वं चोपदिशता—

पञ्चभूतात्मको देहः शिवस्तत्रैव तिष्ठति।
शिवाद्यवनिपर्यन्तो लोकोऽयं शङ्करात्मकः ॥८१॥

इति पद्येन स्वदेह एव शिवसान्निध्यस्य चिन्तनं कृत्स्ने लोके शङ्कररूपतया दर्शनं च मोक्षमूलतया संकेतितम्।

विषयानुक्रमणिका

निर्वाणतन्त्रस्य

—०—

तोडलतन्त्रस्य

—०—

कामधेनुतन्त्रस्य

—०—

फेत्कारिणीतन्त्रस्य

ज्ञानसंकलिनीतन्त्रस्य

—०—

देवीकालोत्तरागमस्य

श्लोकार्धानुक्रमणी

—०—

योगतन्त्र-ग्रन्थमाला

[६]

तन्त्रसंग्रहः

[तृतीयो भागः]

सम्पादकः

डॉ० रामप्रसादत्रिपाठी

योगतन्त्रविभागाध्यक्षचरः

सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालयस्य

ग्रन्थमालाया मुख्यसम्पादकः

डॉ० भागीरथप्रसादत्रिपाठी 'वागीशः शास्त्री'

अनुसन्धानसंस्थाननिदेशकः

सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये

वाराणस्याम्

२०३६ तमे वैक्रमाब्दे   १९०१ तमे शकाब्दे   १९७९ तमे खैस्ताब्दे

तन्त्रसंग्रहतृतीयभागे प्रकाशितेषु तन्त्रग्रन्थेषु षट्सु प्रथमं गन्धर्वतन्त्रं त्रैपुरसम्प्रदायस्य शाक्तस्य, द्विविधमपि मुण्डमालातन्त्रं कामाख्यातन्त्रं कङ्काल-मालिनीतन्त्रं च वामाचारप्रधानस्य कौलसम्प्रदायस्य, भूतशुद्धितन्त्रमान्तरवरि-वस्याप्रतिपादकम्, सनत्कुमारतन्त्रं च वैष्णवसम्प्रदायस्य वर्तते। जिज्ञासोपश-माय संक्षेपेणात्र तेषां स्वरूपपरिचयः समुपस्थाप्यते।

गन्धर्वतन्त्रम्

ईश्वरपार्वतीसंवादात्मकमेतत् तन्त्रम्। यामलात् सारमुद्धृत्य भगवान् शिवो भोगमोक्षैकसाधनं द्वादशसाहस्रं तन्त्रं वामदेवाख्यवक्त्रेण प्रोवाच। पूर्वमेतत् तन्त्रं देवकीसुताय हंसरूपिणे ब्रह्मणे, नन्दिकेश्वराय, पुष्पदन्ताय च प्रोक्तम्। अत एव च गन्धर्वतन्त्रमिति नाम्ना प्रसिद्धिं जगाम। नन्दिकेश्वरात् तदेतद् दत्तात्रेयेणाधिगतम्, तेन च विश्वामित्रायोपदिष्टम्। द्वाचत्वारिंशत्पटलात्मकेऽस्मिन् तन्त्रे भगवान् शिवः सात्त्विकराजसतामसानि तन्त्राणि पुराणानि च निर्वर्ण्य मोहनार्थं संप्रोक्तानीमानि सर्वाणि शास्त्राणि तन्त्राणि च सदोषाणीति प्रोवाच। पार्वतीप्रार्थनया केवलं शक्तितन्त्रं तेन सन्देहरहितं कृतम्।

सर्वप्रथमं महात्रिपुरसुन्दर्या मन्त्रोद्धारप्रसङ्गे वाग्भव-कामराज-शक्ति-बीजात्मिका कामराजाख्यविद्या लोपामुद्राविद्या च प्रकाशिता। तदनु शाम्भव-शक्तिक्रममुपदिश्य स्वप्नावती-मधुमतीप्रभृतयो विद्याः प्रतिपादिताः, राजराजे-श्वरीकवचं च वर्णितम्। "यन्नोक्तं डामरे तन्त्रे यन्नोक्तं रुद्रयामले। सर्वतन्त्रेषु यन्नोक्तं गन्धर्वे प्रकटीकृतम्॥" (४।८७) इति हि तन्त्रस्यास्य समुद्घोषः।

त्रिविधं देवताशरीरमत्र वर्णितम्—भौतिकम्, मनोमयम्, ज्ञानमयं चेति। तत्र मुद्रया भौतिकम्, यन्त्रेण मनोमयम्, मन्त्रेण च ज्ञानमयं शरीरं निष्पन्नं भवति (५।३८-४०), अतो हेतोरत्र मुद्राणां मन्त्राणां श्रीयन्त्रस्य च वैशद्येन वर्णनं विद्यते। ज्ञानेन कर्मणा च आन्तरबाह्यदेहशुद्धिर्भवति। एतदर्थमेव ज्ञानयोग-कर्मयोगा-वत्र वर्णितौ, तदनु योगपदं निर्वर्ण्याष्टाङ्गो योगो मन्त्रयोगश्च निरूपितः,

> देहाभिमाने गलिते विदिते परमात्मनि।
> यत्र-यत्र मनो याति तत्र तत्र समाधयः॥ (६।८६)

इति च प्रोक्तम्। तदनु त्रिविधां सन्ध्यां च निर्वर्ण्यात्र शूद्रादीनामपि दीक्षाया-मधिकारिता वर्णिता, त्रिविधं तर्पणं च प्रोक्तम्। अन्तर्योगबहिर्योग(आन्तरबाह्य-वरिवस्या)प्रसङ्गेन भूतशुद्धि-न्यासविधि-प्राणायाम-ध्यानयोग-विशेषार्घ्यविधो-विषया वर्णिताः, विविधा उपचाराश्च प्रदर्शिताः। अत्रैव जपयज्ञोऽपि विस्तरेण

वर्णितः। नित्यं नैमित्तिकं काम्यं त्रिविधं कर्म निरूप्य "होमादिकं च विफलं कुमारीपूजनं विना" (२३।१) इति कृत्वा कुमारीपूजनं प्रदर्शितम्। तदनु कामाख्यादीनि पुण्यक्षेत्राणि निर्वर्ण्य गुरुशिष्यलक्षणपुरस्सरो दीक्षाविधिः पुरश्चर्याविधिश्च निदर्शितः, मन्त्रचैतन्यनिरूपणप्रसङ्गेन निगर्भार्थ-रहस्यार्थादयो वर्णिताः, कामकलायाः स्वरूपं च प्रतिपादितम्। होमस्य विधानमुक्त्वा चक्रराजप्रतिष्ठा-कुलाचारप्रभृतीन् प्रकीर्णकान् विषयान् निर्वर्ण्य च शक्तिस्वरूपं सर्वविषसन्देह-भञ्जकं प्रदर्शितम्। अत्रैव को नाम कुलज्ञानी भावज्ञानी चेति निरूप्य, प्रकाशविमर्शाधीनं शिवशक्तिज्ञानं निर्वर्ण्य विविधान् प्रश्नांश्च समाधाय, निष्कलं ब्रह्म वर्णितम्।

प्रथममुण्डमालातन्त्रम्

वामाचारप्रतिपादकं शिवपार्वतीसंवादरूपेण प्रवृत्तं दशपटलात्मकमिदं तन्त्रम्। कालीतन्त्र-कुब्जिका-कालीविलास-डामर-यामल-कालीसर्वस्व-योनि-तन्त्र-संमोहन-विक्रम-कुलार्णव - मातृकाभेद - समयाचार-वीर-तोडल-भैरव-ज्ञान-निर्वाणतन्त्राणि श्रुतानि मया पूर्वम्। अधुना तादृशं तन्त्रं वद, येन जीवः शिवत्वं लभेत इति पार्वत्या उक्ते शिवो मुण्डमालाख्यं तन्त्रराजं प्रोवाच। मुण्डमालामहातन्त्रे एका दुर्गैव ज्ञानसाधनत्वेन वर्णिता। दुर्गा चैषा पशौ नाधि-ष्ठितेति वीरतन्त्रे प्रोक्तम्। शिवो वक्ति पार्वतीं यत् त्वया भैरवतन्त्र-योनि-तन्त्र-कुलार्णव-कुलाचार - गुप्तसाधन-गुरुतन्त्र-निर्वाण-समयाचार-वीरतन्त्र-डामर-डमर-डीन-कालीविलास - ब्रह्मयामल-विष्णुयामल-शिवयामल-मिश्रया-मल-शक्तियामलतन्त्राणि श्रुतानि, तथापि तव सन्देहनिवृत्तिर्न संजातेति तदर्थं दिव्यभावप्रदायकं तन्त्रमेतदुपदिश्यते।

अत्र प्रथममवधूत-संवित्-सुराप्रभृतीनां लक्षणानि प्रदर्श्य ततो योनिमुद्रा-प्रकरणम्, दुर्गायाश्चरितम्, दुर्गायाः शतनामानि, मोहन-कुलज्ञान-योगिनीहृदय-संमोहन-वीरतन्त्र-श्रीतन्त्र-कुलार्णव-कालीतन्त्र-कालीविलास-कालीकल्पलतिका-प्रोक्ता गुप्ता गुप्ततराश्च पूजाविषयः प्रदर्शिताः। तदनु शवसाधनम्, श्मशानसाधनम्, दुर्गायाः कवचं स्तोत्रं च प्रोक्तम्। अन्तर्यागप्रसङ्गेनात्र नाडीपरिज्ञानम्, पिण्ड-पद-रूपादीनां स्वरूपं च वर्णितम्। उग्रताराक्रमं निर्वर्ण्य मन्त्रसिद्धिविद्यासिद्धिश्च प्रदर्शिता। यामले,डामरे, कुलोड्डीशे, कुलार्णवे च विस्तरेण प्रोक्तं मन्त्रार्थं मन्त्रचैतन्यं च, शक्तियामले, सिद्धेश्वरतन्त्रे, कुलाचले च प्रोक्ता विद्यासिद्धिश्चात्र संक्षेपेण प्रोक्ताः। तदनु कालिकायास्तारायाश्च माहात्म्यं निर्वर्ण्य मन्त्रोद्धारं च प्रदर्श्य राजमोहनाख्यं कवचं पठितम्। कालीतन्त्रे, भैरवे, यामले, भैरवीतन्त्रे च भुवनायाश्चरितं न वर्णितमिति कृत्वा तदप्यत्र वर्णितम्। अन्ते च "शक्तिमार्ग

विना जन्तोर्न भवितनं च सद्गतिः" (१०।७) इति हेतोर्ज्ञानकाण्डं गुह्यस्तोत्र-कवचादिकं च प्रदर्शितम् ।

द्वितीयमुण्डमालातन्त्रम्

शिवपार्वतीसंवादरूपेण प्रवृत्ते षट्पटलात्मकेऽस्मिन् तन्त्रे प्रथमं दशमहाविद्याः षडाम्नायनमस्कृता वर्णिताः । वर्णमाला अक्षरमालाऽपि कथ्यते । तस्या अत्र विस्तरेण वर्णनं विद्यते । वस्तुतो मन्त्रस्य बाह्यपूजायां जपकाले स्फाटिक-मौक्तिक-रुद्राक्षादीनां माला विधाय जपः क्रियते, एवमेव आन्तरपूजायां वर्ण-मालामेवाक्षमालारूपेणाङ्गीकुर्वन्ति साधकाः । तत्र क्षकारस्य मेरुरूपेण कल्पना क्रियते । जपविधिनिर्देशपुरस्सरं तदेतत्सर्वमत्र वर्णितम् । तदनु पीठानामासनानां च स्वरूपं निर्वर्ण्य, बलिदानविधिं पुरश्चर्याविधिं च प्रदर्श्य, भैरवीकल्पोक्तं दीक्षायाः स्वरूपमत्र निर्दर्शितम्, वीरदिव्याचारयोः स्वरूपं च परोक्षवृत्त्या स्पष्टीकृतम् । अत्रैव भुवनेश्वरीप्रभृतीनां मन्त्र-पूजा-यन्त्रादिस्वरूपं तत्फलं च प्रतिपादितम् ।

कामाख्यातन्त्रम्

नवपटलात्मकमेतत् तन्त्रं शिवदेवीसंवादरूपेण प्रस्तुतम् । सर्वप्रथममत्र योनिरूपा महाविद्या कामाख्या वर्णिता, तस्या मन्त्रोद्धारश्च कृतः । कुलाचारः, वीराचारः, कौलाधिकारलक्षणम्, कुलज्ञानमहत्त्वमित्यादिप्रसङ्गेन तत्त्वपञ्चकम्, कौलचक्रम्, योनिसाधनं चात्र वर्णितम् । तदनु पुरश्चर्याविधिं गुरुतत्त्वं च प्रदर्श्य दिव्यभावपशुभावयोरन्तरं च निरूप्य कौलानां पूर्णाभिषेकविधिर्वर्णितः । अत्रैव—

> षड्दर्शनमहाकूपे पतिताः पशवः प्रिये ।
> परमार्थं न जानन्ति दर्वी पाकरसं यथा ।। (५।५)

इत्युक्त्वा, निर्वाणस्य स्वरूपं च प्रतिपाद्य, वस्तुतस्तु या देवी कालिका माता सर्वविद्यास्वरूपिणी सैव कामाख्येति सुष्ठु प्रतिपादितम् ।

सनत्कुमारतन्त्रम्

एकादशपटलात्मकमेतत् तन्त्रम् । अत्र पुलस्त्यः सनत्कुमारं श्रीकृष्णस्य माहात्म्यं पृच्छति, सनत्कुमारश्च श्रीकृष्णो विष्णुरित्यभिधीयत इत्युक्त्वा तस्य पूजाविधानं विस्तरेण वक्ति । श्रीकृष्णोपासनाप्रतिपादकविष्णुपञ्चायतनसम्प्रदायस्य विशिष्टोऽयं ग्रन्थो दक्षिणाचारनिरूपणपरः । अत्र भूतशुद्धि-प्राणायाम-मातृकान्यास-पीठन्यासप्रभृतयो विषया अपि वर्णिताः । नवमे पटले त्रैलोक्यमङ्गलं नाम कवचं

पठितम्। तदनु जपमालायाः स्वरूपं प्रदर्श्य पुरश्चर्याविधानं मन्दिरदानविधि-दीक्षाविधिश्च निरूपितः। अन्ते च संक्षेपेण सलक्षणो योगो निरूपितः।

भूतशुद्धितन्त्रम्

सप्तदशपटलात्मकमेतत् तन्त्रमान्तरखरिवस्याप्रतिपादकमीश्वरदेवीसंवादरूपेण प्रवर्तते। अत्र भूतशुद्धिः, देहशुद्धिः (न्यासः), प्राणायामश्चेत्येतत् त्रयं तत्त्वत्रयनाम्ना वर्णितम्। अत्र अन्तःस्नानस्य सन्ध्यायाश्च तात्त्विकार्थः प्रदर्शितः, अजपाध्यानविधिश्च वर्णितः। भूतशुद्धिप्रक्रियाऽत्र पौनःपुन्येन स्थूणानिखननन्यायेन दार्ढ्येन प्रतिपादिता। कुण्डलीस्वरूपं च वर्णितम्।

अत्रापि "मन्त्रार्थं मन्त्रचैतन्यं योनिं चापि न वेत्ति यः" (१४।१) इत्युक्त्वा विवृतान्येतानि। मातृकान्यासोऽप्यत्र वर्णितः। अन्ते च संक्षेपेण गद्यमयं भूतशुद्धिविवरणं लिखितम्।

जीवः स्वात्मानं कर्तारं मन्यते। अत एव मनोनिविष्टः स भवति। षट्चक्रसाधनबलाज्जीवो यदा शुद्धसत्त्वात्मको जायते, तदा सदसत्कर्मविवर्जितो भवति। सत्त्वस्थो जीवः सुषुम्नान्तर्गतां चन्द्रकोटिसुशीतलां बिसतन्तुतनीयसीं प्रभास्वरां कुण्डलीशक्तिमनुभवति। तत्रानन्तवर्णात्मिकपद्मं पश्यति। पञ्चाशन्मातृकास्वरूपमनुभवति। अन्ते चान्तरमातृकाजपक्रमेण भूतशुद्धिप्रक्रियया च शिवभावमाविशति।

कङ्कालमालिनीतन्त्रम्

भैरवभैरवीसंवादरूपेण प्रवृत्ते पञ्चपटलात्मकेऽस्मिन् तन्त्रे सर्वप्रथमं भैरवी वर्णानां कारणं पृच्छति। भैरवश्च प्रसङ्गेन गुरुलक्षणमुक्त्वा कौलमतानुसारेण आदिक्षान्तमातृकाणां शब्दब्रह्मस्वरूपत्वमुन्मीलयति। मन्त्रार्थ–मन्त्रचैतन्य–योनिमुद्रात्मकस्य तत्त्वत्रयस्य वर्णनमत्रापि विद्यते। अत्रैव योनिकवचं वर्णितम्। गुरुपूजनं च निर्वर्ण्य गुरुगीता गीता, महाकालीमनुः समुद्धृतः, त्रिविधा पूजा, पञ्चविधा शुद्धिश्च प्रदर्शिता। तदनु भूतशुद्धिं निर्वर्ण्य मूलविद्या ध्यानादिपुरस्सरा, पूजाप्रकरणे च आरम्भ–तरुण–प्रौढाख्या उल्लासा वर्णिताः। पुरश्चरणपटलेऽत्र पञ्चमे रुद्राक्षस्य भस्मनश्च माहात्म्यम्, नरास्थ्यादिसमुद्भूता मालाः, रुद्राक्षधारणस्थानानि, मृत्युञ्जयगायत्र्यादयो मन्त्राः, लतागृहम्, सप्तविधा उपायाः, आद्यन्तगोपनम्, वर्णपरिज्ञानं ध्यानं चेत्यादयो विषया वर्णिताः। अन्ते च कालिकाविद्याया माहात्म्यं प्रदर्शितम्।

विषयानुक्रमणिका

प्रथममुण्डमालातन्त्रस्य

द्वितीयमुण्डमालातन्त्रस्य

कामाख्यातन्त्रस्य

सनत्कुमारतन्त्रस्य

भूतशुद्धितन्त्रस्य

कङ्कालमालिनीतन्त्रस्य

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

२६१

श्रीमन्महामाहेश्वराचार्यवर्य-

श्रीमदभिनवगुप्तपादाचार्यविरचितः

तन्त्रसारः

'नीरक्षीरविवेक'-हिन्दीभाष्यसंवलितः

प्रथमः खण्डः

(अध्यायाः १ - ७)

भाष्यकार

डॉ० परमहंस मिश्र

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

विषयानुक्रमः

चतुर्थमह्निकम् [चौथा आह्निक] शाक्तोपाय प्रकाश—पृ० ९१—१५०

विकल्प संस्कार, सत्तर्क, सदागम, सद्गुरूपदेश, विकल्पका बल, बन्धनकी अनुभूति, संसार प्रतिबन्ध हेतु, प्रतिद्वन्द्वी विकल्प, अभ्युदय हेतु ९१–९५, परमार्थं तत्त्व, वस्तुमात्र की व्यवस्था का स्थान, विश्व का ओज विश्व प्राण प्रक्रिया, अहम् की विश्वात्मकता और विश्वोत्तीर्णता, मायान्धों में संद्विकल्प की अनुत्पत्ति ९५–९७, वैष्णव आदि विभिन्न मतवादियों का स्तर ९७–१०१, विकल्प संस्कार से स्वरूप में अनुप्रवेश १०१, परतत्त्व विषयक जिज्ञासा, द्वैतमें रहने की स्थिति को भङ्ग करने का आग्रह, परतत्त्व के समक्ष विपक्ष की महत्त्व हीनता, सत्तर्क का उदय, १०१–१०४ गुरु-आगम का निरूपक, समुचित विकल्पका उदय और आगम, सत्तर्क का लक्षण, भावनाकी परिभाषा १०४–१०६, सत्तर्क की सक्षात् उपायता, तप, यम, नियम, प्राणायाम आदि की वेद्य मात्र में स्थिति और संविद् में व्यापार का अभाव,प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधिरूप योगाङ्गों में अभ्यास का महत्त्व, शिवात्मक परतत्त्वमें अभ्यास असम्भव, अभ्यास की परिभाषा, संविद् रूपता में आदान और अपसारण के अभाव के कारण अभ्यास व्यर्थ, तर्क की अनुपयोगिता १०६–११३, लौकिक व्यवहारमें अभ्यासका अर्थ, द्वैताधिवास की परिभाषा, स्वरूपाख्याति, विकल्प से द्वैत का अपसारण ११३–११५, परामार्थ का विश्लेषण-विकासोन्मुख-विकसत् और विकसित 'स्व' रूप का विवेचन, योगाङ्गों की साक्षात् अनुपायता ११५–११७ सत्तर्क साक्षात् उपाय, शुद्ध विद्या, याग ११७–१२०, लक्षण सहित होम, जप, व्रत १२०–१२३, योग, परमेश्वर का स्वभाव, पूर्णता, शक्ति, कुल, ऊर्मि, हृदय, सार, स्पन्द, विभूति, त्रीशिका, काली, कर्षणी, चण्डी, वाणी, भोग, दृक् आदि से अभिधीयमान परमेश्वर का स्वरूप १२३–१३१, पूर्णता-संवित्, असंख्य शक्तिसम्पन्न परमेश्वर की श्रीपरा शक्ति १३१– ३२, श्रीपरापरा शक्ति, श्रीमदपरा शक्ति, शब्दान्तरों से उक्त कालकर्षणी पराशक्ति १३२–१३४, इन चार शक्तियों का सृष्टि, स्थिति और संहार से संगुणित १२ रूपों के आकलनका प्रकार १३४–१३९, श्रीकाली और उसका कर्तृत्व, कलन की परिभाषा, रहस्यों के गोपन और स्थापन का दृष्टिकोण १३९–१४२, मिथ्यादर्शन का परित्याग, अनुभव-स्तोत्रका प्रसङ्ग, शुद्धि-अशुद्धि १४२–१४५, शुद्धि का सोदाहरण विवेचन, विधि और निषेध की अकिंचित्करता १४५–१४७, जडत्व निश्चय के

१९१–१९५, मासोदय, रात्रि, दिन, तिथि १९५–१९७, प्राणार्क में अपानचन्द्र की कलाओं का अर्पण, पक्षसन्धि, आमावस्य और प्रातिपद् तुट्यर्ध, ग्रहण १९७–१९९, माया प्रमाता राहु, पारलौकिक फलप्रद काल, पूर्णिमा, पक्षसन्धि, सूर्य ग्रहण १९९-२०२ वर्षोदय, उत्तरायण और दक्षिणायन, गर्भ से उत्पत्तितक के ६ विकार २१२–२०५, चतुर्युग, मन्वन्तर, ब्राह्मदिन, जनलोक और प्रलयाकल दशा, ब्राह्मी सृष्टि, ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र के आयुष्य २०६–२०७, शतरुद्र, ब्रह्माण्डविनाश, श्रीकण्ठनाथ २०७–२०९, गहनेश, प्राण प्रशम २१०–२११ सादाशिव दिन और रात, अनाश्रितदिन, सामनस्य काल, अशेष काल प्रसर के विलय का चक्र २११–२१३ अठारह गणित विधि, प्राण संविद्, उपाधि, चिन्मात्र स्पन्द, कालोदय २१३–२१५, प्राण के समान अपानमें भी कालोदय वैचित्र्य, शैशव आदि अवस्थाओंके कारण २१५–२१७, समान में कालोदय, पाँच संक्रन्तियाँ २१७–२२०, दक्षिण वाही पिववत् मध्याह्न, विषुवद् दिवस की १२-१२ संक्रान्तियाँ २२०–२२१, उदान और व्यानमें कालोदय, २२२–२२३ वर्णोदय, अयत्नज और यत्नज मन्त्रोदय, मन्त्रदेवताके साथ तादात्म्य २२३–२२६ सूक्ष्म और स्थूल प्राणचार, कालग्रास, एक मात्र सम्पूर्ण सम्वेदन २२६–२२७, संवेदन का भेदक काल, ज्ञान का क्षण, २२८–२२९, एकासी पदवाली मातृका शक्ति २३०, आत्म-प्रत्यभिज्ञान २३१, भैरवीभाव २३१–२३२, समस्त काल प्रसर, पवन और महेश्वर की तुलना २३२

सप्तममाह्निकम् [सातवाँ आह्निक] देशाध्वा—पृ० २३३—२

विश्रान्ति के क्रम में निर्भर परिपूर्ण संविद् की सम्प्राप्ति २३३–२३४, छत्तीसतत्त्वोंके विशेषज्ञों द्वारा विश्वोत्तीर्ण और विश्वमय संविद्का संवेदन प्रक्रिया ज्ञान आवश्यक, २३४–२३५, पृथ्वी तत्त्व, ब्रह्मलोक, शतरुद्रक्षेत्र, जलतत्त्व, दस-दस गुने अहंकार पर्यन्त तत्त्व, बुद्धितत्त्व, प्रकृति, प्रकृत्यण्ड २३५–२३७, पुरुषतत्त्व, मायाण्ड २३७–२३८, शुद्धविद्या से शक्त्यण्डक्षेत्रतक का विस्तार, व्यापिनी शक्ति, उत्तर व्यापक पूर्व व्याप्य तत्त्व २३८-२३९ शिवतत्त्व की व्यापकता, मृत्यु के उपरान्त गतिका अधिकार २३९–२४० आयतन और आयतन के अधिपति, निवृत्तिकला से कलनीय १६ पुरों वाला ब्रह्माण्ड २४१, जल, तेज, वायु और आकाश के गुह्याष्टक २४२-२४४ संविदनु प्रवेश २४६, परिशिष्ट २४७–२६४

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
२६१

श्रीमन्महामाहेश्वराचार्यवर्य-
श्रीमदभिनवगुप्तपादाचार्यविरचितः

तन्त्रसारः

'नीरक्षीरविवेक'-हिन्दीभाष्यसंवलितः

द्वितीयः खण्डः

(अध्यायः ८-२२)

भाष्यकार
डॉ० परमहंस मिश्र

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमः

नवममाह्निकम् [नवाँ आह्निक] तत्त्वाध्वा—तत्त्वभेद निरूपण प्रकरण पृ० ५१—८३

॥ श्रीः ॥

विद्याभवन प्राच्यविद्या ग्रन्थमाला

१२०

महामाहेश्वरश्रीमदभिनवगुप्तपादाचार्यविरचितः

श्रीतन्त्रालोकः

(प्रथमो भागः)

(१-३ आह्निकम्)

श्रीमदाचार्यजयरथकृतया 'विवेक'व्याख्यानेन
'ज्ञानवती'-हिन्दीभाष्येण च विभूषितः

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

प्रो० राधेश्याम चतुर्वेदी

साहित्याचार्य, व्याकरणाचार्य
एम० ए० (संस्कृत), पी-एच०डी०, लब्धस्वर्णपदक
संस्कृत विभाग, कला संकाय,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

चौखम्बा विद्याभवन

वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

प्रथममाह्निकम्

द्वितीयमाह्निकम्

कारिका-संख्या

तृतीयमाह्निकम्

॥ श्री ॥
विद्याभवन प्राच्यविद्या ग्रन्थमाला
१२०

महामाहेश्वरश्रीमदभिनवगुप्तपादाचार्यविरचितः

श्रीतन्त्रालोकः

(द्वितीयो भागः)

(४-७ आह्निकम्)

श्रीमदाचार्यजयरथकृतेन 'विवेक'व्याख्यानेन
'ज्ञानवती'-हिन्दीभाष्येण च विभूषितः

व्याख्याकारः सम्पादकश्च
प्रो० राधेश्याम चतुर्वेदी
व्याकरणाचार्य, एम० ए० (संस्कृत), पी-एच्०डी०, लब्धस्वर्णपदक
संस्कृत विभाग, कला संकाय,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

चौखम्बा विद्याभवन
वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

चतुर्थमाह्निकम्

पञ्चममाह्निकम्

कारिका-संख्या

षष्ठमाह्निकम्

सप्तममाह्निकम्

कारिका-संख्या

|| श्रीः ||

विद्याभवन प्राच्यविद्या ग्रन्थमाला

१२०

महामाहेश्वरश्रीमदभिनवगुप्तपादाचार्यविरचितः

श्रीतन्त्रालोकः

(तृतीयो भागः)

(८-१० आह्निकम्)

श्रीमदाचार्यजयरथकृतया 'विवेक'व्याख्ययानेन

'ज्ञानवती'-हिन्दीभाष्येण च विभूषितः

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

प्रो० राधेश्याम चतुर्वेदी

साहित्याचार्य, व्याकरणाचार्य

एम० ए० (संस्कृत), पी-एच०डी०, स्वर्णपदक

संस्कृत विभाग, कला संकाय,

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

चौखम्बा विद्याभवन

वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

अष्टममाह्निकम्

नवममाह्निकम्

दशममाह्निकम्

कारिका-संख्या

॥ श्रीः ॥

विद्याभवन प्राच्यविद्या ग्रन्थमाला

१२०

महामाहेश्वरश्रीमदभिनवगुप्तपादाचार्यविरचितः

श्रीतन्त्रालोकः

(चतुर्थो भागः)

(११-२० आह्निकम्)

श्रीमदाचार्यजयरथकृतया 'विवेक' व्याख्यानेन
'ज्ञानवती'-हिन्दीभाष्येण च विभूषितः

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

प्रो० राधेश्याम चतुर्वेदी

साहित्याचार्य, व्याकरणाचार्य
एम० ए० (संस्कृत), पी-एच्०डी०, लब्धस्वर्णपदक
संस्कृत विभाग, कला संकाय,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

चौखम्बा विद्याभवन

वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

एकादशमाह्निकम्

द्वादशमाह्निकम्

त्रयोदशमाह्निकम्

चतुर्दशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

पञ्चदशमाह्निकम्

षोडशमाह्निकम्

सप्तदशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

अष्टादशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

एकोनविंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

विंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

।। श्रीः ।।

विद्याभवन प्राच्यविद्या ग्रन्थमाला

१२०

महामाहेश्वरश्रीमदभिनवगुप्तपादाचार्यविरचितः

श्रीतन्त्रालोकः

(पञ्चमो भागः)

(२१-३७ आह्निकम्)

श्रीमदाचार्यजयरथकृतया 'विवेक' व्याख्यानेन

'ज्ञानवती'-हिन्दीभाष्येण च विभूषितः

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

प्रो० राधेश्याम चतुर्वेदी

साहित्याचार्य, व्याकरणाचार्य

एम० ए० (संस्कृत), पी-एच्० डी०, स्वर्णपदक

संस्कृत विभाग, कला संकाय,

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

चौखम्बा विद्याभवन

वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

एकविंशमाह्निकम्

द्वाविंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

त्रयोविंशमाह्निकम्

चतुर्विंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

पञ्चविंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

षड्विंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

सप्तविंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

अष्टाविंशमाह्निकम्

एकोनत्रिंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

त्रिंशमाह्निकम्

एकत्रिंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

द्वात्रिंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

त्रयस्त्रिंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

चतुस्त्रिंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

पंचत्रिंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

षट्त्रिंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

सप्तत्रिंशमाह्निकम्

कारिका-संख्या

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
527

हर-गौरीसंवादात्मकं

तोडलतन्त्रम्

निर्वाणतन्त्रम्

भाषाटीकासमन्वितम्

व्याख्याकार:
श्री एस० एन० खण्डेलवाल

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमः

❖

निर्वाणतन्त्रम्

भाषाभाष्यसमन्वितम्

विषयानुक्रम

पटल पृष्ठाङ्क

●

Gaekwad's Oriental Series
Published under the Authority
of the Maharaja Sayajirao
University of Baroda, Baroda

General Editor :
J. P. Thaker,
Director, Oriental Institute,
Baroda

No. 170

THE MAHARAJA SAYAJIRAO UNIVERSITY OF BARODA
सत्यं शिवं सुन्दरम्

श्रीमद्भास्कररायप्रणीतः

तृचभास्करः।

विषयानुक्रमः

नवशक्ति ग्रन्थमाला-४

त्रिकूटारहस्यम्

(कल्याणी हिन्दी टीका सहित)

सम्पादक/टीकाकार

आचार्य मृत्युञ्जय त्रिपाठी

नव शक्ति प्रकाशन

नवशक्ति प्रकाशन, चौकाघाट, वाराणसी

२००२ ई.

विषय-सूची

त्रिकूटारहस्यम् (उपासना-खण्ड)

त्रिकूटारहस्यम् [स्तुति (कवच) खण्ड]

●●

GURUMANDAL SERIES NO. XXVIII

TRIPURA RAHASYAM

MAHATMYA KHANDAM

WITH

HINDI TRANSLATION

VOLUME I

5, CLIVE ROW
CALCUTTA-1

VIKRAM ERA 2027 | FIRST EDITION 2000 | A. D. 1970

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

त्रिपुरारहस्य के माहात्म्यखण्ड की विषयानुक्रमणिका

अध्यायसंख्या	विषयविवरण	पृष्ठसंख्या
	देवी से इन्द्र का विवाद ।	८६
	बृहस्पति द्वारा भगवती त्रिपुरा की स्तुति।	६३
	देवगण द्वारा भगवती की स्तुति करने पर त्रिपुरा द्वारा स्वप्रभाव को प्रकाशित करना।	६५
	विष्णु द्वारा इन्द्रादि देवगण को भगवती के दिव्यप्रभाव का वर्णन।	६७
	सभी देवगण का भगवती के परमोघप्रभाव के प्रति आश्वस्त होना और त्रिदेवों का स्वधामगमन और इस प्रकार इन्द्रादि देवताओं का मोहनाश होना।	६६
१०	भगवती के त्रिपुराख्यान का निरूपण।	१००
	भगवती द्वारा तीन रूप धारण करना।	१०१
	सृष्टि के विषय में परशुराम की शंका करना।	१०३
	ब्रह्मा द्वारा सृष्टि की रचना में तपस्या करने के बाद नानाविध उपायों से उसे आरम्भ करने के विषय में भार्गव परशुराम को श्रीदत्तात्रेय का उपदेश।	१०५
	बढ़ती हुई सृष्टि के विषय में ब्रह्माजी द्वारा तप से सन्तुष्ट की हुई भगवती को अपनी बाधायें बताना।	१०७
	ब्रह्मा तथा मृत्यु का सम्वादवर्णन।	१०६
	जगत्कृत्य से अत्यन्त संत्रस्त त्रिदेवों का भगवती को प्रसन्न कर उनसे अपना अभीष्ट सिद्ध करने का प्रयत्न।	१११
	ब्रह्मादिदेवगण को स्वशक्तिप्रदान करने के लिये अपने अंश से श्रीलक्ष्मी, पार्वती और सरस्वती का आविर्भाव करना तथा उनकी विच्छित्ति का वर्णन।	११३
	त्रिपुराख्यान के चरित्र के श्रवण का फल।	११५
११	भगवती के त्रिरूपाख्यान का वर्णन।	१२०
	बृहस्पति के समक्ष देवराज इन्द्र का आत्मनिवेदन।	१२१
	देवराज द्वारा ब्रह्मा के पास सब देवगण सहित बृहस्पति के निर्देशन में ब्रह्मलोक में गमन तथा ब्रह्मा की सभा का वर्णन।	१२३
	श्रीब्रह्मा और देवराज का परस्पर सम्वाद।	१२५
१२	भगवती रमा का उपाख्यान—कामदेव की कथा।	१२७
	देवगण को लक्ष्मी का वरदान।	१२६
	तपस्या से प्रसन्न भगवती श्री का आविर्भाव।	१३१
	देवगण के सभी कार्यों में सहायताप्रदान करने के लिये लक्ष्मी द्वारा कामदेव को समर्पण करना।	१३३
	कामदेव का उपाख्यान।	१३५
१३	लक्ष्मी तथा कामदेव का उपाख्यान।	१३६

अध्यायसंख्या	विषयविवरण	पृष्ठसंख्या
	देवी को सन्तुष्ट करने को देवगण द्वारा काम को फिर से जीवित करने की प्रार्थना।	४८१
	ललिता द्वारा काम को वरदान।	४८३
	काम के उज्जीवन के बाद शङ्करांश से भगवती गिरिजा में स्कन्द का आविर्भाव।	४८५
४८	भगवान् श्रीविष्णु द्वारा मोहिनी रूप से शंकर को मोहित करने का प्रश्न ;	
	भगवान् विष्णु द्वारा साठ हजार वर्ष तक त्रिपुरा की आराधना।	४८७
	देवीमाहात्म्य में श्रीविष्णु द्वारा मोहिनीरूप के धारने की उत्कृष्टता का निरूपण।	४८९
	श्रीविष्णु द्वारा मोहिनीस्वरूप से शिव का सम्मोहन।	४९१
	त्रिपुरारूप से भगवती का द्वादश पीठों में नित्य विराजमान होना।	४९३
४९	ललितामाहात्म्य।	४९५
	त्रिपुरा के माहात्म्य के विषय में हयग्रीव तथा अगस्त्य का सम्वाद।	४९७
	राक्षसराजभण्ड के प्रबल प्रताप का वर्णन।	४९९
	भण्ड के द्वारा त्रैलोक्य का विजयवर्णन।	५०१
५०	शिवजी को प्रसन्न करने के लियेदैत्यराज भण्ड की तपस्या का वर्णन।	५०३
	उसकी उग्र तपस्या से इन्द्र के आसन का डगमगाना।	५०५
	श्रीशिव से वर प्राप्तकर भण्ड द्वारा लोकों को त्रस्त करना।	५०७
	शून्यकपुर में भण्ड के वैभव का वर्णन।	५०९
	गणेश एवं भण्ड का युद्धकौशलवर्णन।	५११
	गौरी से पराजित भण्ड का ब्रह्मादि देवगण की मध्यस्थता से शून्यकपुर को लौट जाना।	५१३
५१	ललिता माहात्म्य के प्रकरण में भण्ड से निष्कासित देवराज प्रभृति को देवगण के गुरु बृहस्पति	५१४
	द्वारा आश्वासन तथा ललिता को प्रसन्न करने के हेतु तपस्या का उपदेश।	५१५
	देवगण द्वारा तन्त्र मार्ग से यज्ञ करने पर भगवती का प्रसन्न होकर चिदग्निकुण्ड से आविर्भाव।	५१७
	भगवती की लोकोत्तर अद्भुत शोभा का वर्णन।	५१९
	श्रीबृहस्पति द्वारा भगवती त्रिपुरा की स्तुति।	५२१
	पराम्बा की स्तुति।	५२३
	प्रसन्न हुई भगवती द्वारा देवगण को अभीष्ट वरदान देना।	५२५
५२	भगवती से आश्वस्त हुए देवगण द्वारा उनके गुरु बृहस्पति के आदेश से देवी के स्वरूप दर्शन के लिये	
	श्रीसूक्त का जपविधान।	५२६
	इधर श्रुतवर्म्मा द्वारा देवगणको पराजित करने के लिये मन्त्रणा।	५२९
	श्रुतवर्मा के भाषण की मदोन्मत्तद्वारा भर्त्सना।	५३१
	ज्वालामालिनिका द्वारा दैत्यगण के मार्ग को रोकने के लिये अग्नि की ज्वाला का प्रसार करना।	५३३

० समाप्त ०

योगतन्त्र-ग्रन्थमाला
[१२]

त्रिपुरार्णवतन्त्रम्

कुलपतिश्रीविद्यानिवासमिश्रप्ररोचनया
विभूषितम्

श्रीसीतारामशास्त्रिकविराज-श्रीरुद्रदेवत्रिपाठिभ्यां
प्रणीतया भूमिकया च समलङ्कृतम्

सम्पादकः
डॉ. शीतलाप्रसाद-उपाध्यायः
प्राध्यापकः,
योगतन्त्रविभागस्य
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये
वाराणसी

वाराणस्याम्

२०४८ तमे वैक्रमाब्दे १९१३ तमे शकाब्दे १९९२ तमे खैस्ताब्दे

विषयानुक्रमणिका

श्रीविद्यार्णवे

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
615

श्रीनागभट्टप्रणीतः

त्रिपुरासारसमुच्चयः

TRIPURĀ-SĀRA-SAMUCCAYAH

गोविन्दशर्मकृत'सम्प्रदायदीपिका'व्याख्यासहित-
'कौलिनी'हिन्दीव्याख्यासमन्वितः

कौलिनीभाष्यकारः

श्रीमधुसूदनप्रसादशुक्लः

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

श्रीविद्यारण्य का जीवनकाल ईसा की ग्यारहवीं सदी के पूर्वार्ध के बाद का है। इस तरह श्रीविद्यार्णव का रचना-काल ईसा की ग्यारहवीं सदी का उत्तरार्ध ठहरता है। चूँकि श्रीविद्यार्णव में त्रिपुरासारसमुच्चय के श्लोक उद्धृत हैं, अतः यह अनुमान लगाने में कोई अत्युक्ति नहीं है कि इस ग्रन्थ की रचना ग्यारहवीं सदी के पूर्वार्ध या इससे पूर्व हो चुकी थी; क्योंकि संचारसुविधा-विहीन उस युग में किसी ग्रन्थ को लिखे जाने के बाद प्रसारित होने और प्रामाणिक ग्रन्थ के रूप में प्रतिष्ठित होने में पचास वर्ष का समय लगाना सर्वथा स्वाभाविक है।

पटलसार

जैसा कि निवेदन किया जा चुका है; इस ग्रन्थ में कुलनायिका के आराधन-क्रम के विभिन्न बिन्दुओं का संस्पर्श किया गया है, अतएव ग्रन्थ के समग्र प्रतिपाद्य विषयों से अवगत होने के लिए इसके प्रत्येक पटल की विषयवस्तु से अवगत होना असंगत नहीं; अपितु सन्दर्भ-सापेक्ष है।

प्रथम पटल—इस ग्रन्थ के प्रथम पटल में मात्र १८ श्लोक हैं। इस पटल में मंगलाचरण के बाद कुलनायिका त्रिपुरा के अर्चन-उपक्रम में भूतशुद्धि, मणिद्वीप तथा उसमें मणिमण्डप, रत्नसिंहासन, उस पर देवी के आसनबीज और उस पर प्रतिष्ठिता देवी के ध्यान का निरूपण किया गया है।

द्वितीय पटल—भूतशुद्धि और कुलनायिका का ध्यान बताने के बाद द्वितीय पटल में पाँच बाणों के बीज, उनका न्यास, कलान्यास, विद्यान्यास, पञ्च कामबीज और कामन्यास का निरूपण करने के बाद त्र्यक्षरी बाला विद्या के तीनों बीजों का उद्धार और उनके जप-फल का निरूपण किया गया है। अक्षमाला से इस मन्त्र के जप की वरीयता रेखांकित करने के बाद चतुरक्षरी मन्त्र का उद्धार तथा अन्त में दीपनी विद्या का उद्धार बताया गया है; क्योंकि शिव से अभिशप्ता होने के कारण जब तक इस प्रसुप्ता विद्या को जागृत या दीपित नहीं कर लिया जाता, उसकी साधना फलवती नहीं होती। इस पटल में ३९ श्लोक हैं।

तृतीय पटल—विगत पटल में मन्त्रयोग का निरूपण करने के बाद इस पटल में नाड़ीविज्ञान और प्राणायाम विधि-सहित स्वरविज्ञान की विवेचना की गई है। चौवन श्लोक वाले इस पटल में वायुसञ्चार का प्रकार, प्राणों की आश्रयभूता नाडियों का निरूपण, प्राणवायु से तत्त्वोदय एवं उसके फलों, प्राण-संयम विधि, अगर्भ और सगर्भ प्राणायाम और उसकी फलश्रुति बताने के बाद प्राणायाम से होने वाले लाभों का निरूपण किया गया है।

चतुर्थ पटल—इस पटल में योनिमुद्राबन्ध विधि, ब्रह्मग्रन्थि के भेदन की विधि, कुण्डलिनीजागरण की विधि, अमृतपान की विधि, मन्त्रों के छिन्न आदि ४९ दोष तथा योनिमुद्रा से इन दोषों के शमन की विधि का निरूपण किया गया है। इस पटल में २३ श्लोक हैं।

पञ्चम पटल—इस पटल का प्रतिपाद्य विषय षट्चक्र-विज्ञान है। अतः इस पटल में मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञा—इन चक्रों की शरीर में संस्थिति, इनमें से प्रत्येक चक्र का ध्यान और ध्यानपूर्वक इनमें से प्रत्येक चक्र के भेदन से भूत-भविष्य-दर्शन, वार्द्धक्य-विजय, अजरता-अमरता-प्राप्ति, आकाशगमन-सिद्धि, मृतक को जीवन-दानशक्ति, पूर्व जन्म-स्मृति, देवताओं, गन्धर्वों, यक्षों आदि के साथ परमेश्वर दर्शन आदि फलों के निरूपण-सहित शरीर में स्थित लिंगों, सहस्रार तथा षोडशी कला का वर्णन किया गया है। इस पटल में ५१ श्लोक हैं।

षष्ठ पटल—इस पटल में स्वयम्भू आदि लिंगत्रय में बाला त्रिपुरा के तीनों बीजों के ध्यान की विधि और ध्यान के फल-निरूपण के बाद कुण्डलिनी के उत्थापन एवं संचालन में दक्ष एवं पटु साधकों द्वारा कुण्डलिनी-मुख में वायु के हवन की अत्यन्त गोपनीय एवं सद्गुरु से प्राप्तव्य विधिविशेष का संकेत दिया गया है। तत्पश्चात् ६ श्लोकों में वागीश्वरी के रूप में कुलनायिका का ध्यान और ध्यानफल का निरूपण किया गया है। इस पटल में २८ श्लोक हैं।

सप्तम पटल—इस पटल में तीन प्रकार के यन्त्रों की लेखन-विधि बताई गई है। ये यन्त्र हैं—१. सर्वरक्षाकार त्रैपुर यंत्र, २. कामराज यन्त्र और ३. वशीकरण यंत्र; जिसका नाम नहीं बताया गया है। यन्त्र-लेखन के क्रम में सर्वप्रथम यन्त्र-लेखन हेतु साधक की शारीरिक और मानसिक तैयारी, यन्त्र लिखने के द्रव्य तथा अन्य उपकरणों का विवरण देने के बाद यन्त्र-स्वरूप और उसका लेखनक्रम समझाया गया है। तत्पश्चात् यह बताया गया है कि साधारण मनुष्य ही नहीं; पुराकाल में स्वयं भगवान् शिव, भगवान् विष्णु, प्रजापिता ब्रह्मा, सूर्य, बृहस्पति आदि ने भी इस यन्त्र को धारण किया था। प्राणप्रतिष्ठा-युक्त इस यन्त्र को धारण करने से सभी प्रकार की विपत्तियों और आपदाओं से धारणकर्ता की रक्षा होती है। दूसरा यंत्र कामराज यन्त्र है, जो यथानाम सबको आकर्षित करके वशवर्ती करने वाला है। तीसरे यंत्र का भी यही गुण-धर्म है। इस पटल में २३ श्लोक हैं।

अष्टम पटल—अष्टम पटल में कुलनायिका त्रिपुरा के बाह्य अर्चन की विधि विस्तार से बताई गई है। पटल के प्रारम्भ में ही यह बता दिया गया है कि कुलनायिका की यह रहस्यपूजा अत्यन्त गोपनीय स्थान में अत्यन्त गुप्त विधि से सम्पन्न की जाती है। पशुभाव में स्थित मनुष्य ही नहीं; गाय-बैल आदि पशु तथा पक्षियों की भी इस पर दृष्टि

नहीं पड़नी चाहिए। गोपनीयता की इस अनिवार्यता का निरूपण करने के बाद पञ्चशुद्धि (स्थानशुद्धि, देहशुद्धि, द्रव्यशुद्धि, देवशुद्धि और मन्त्रशुद्धि) का विधान एवं शोधन-मन्त्रों का उद्धार बताया गया है। इसके बाद 'अर्चन यन्त्र' का स्वरूप बताया गया है। त्रिकोण, पञ्चदल कमल, षड्दल कमल, अष्टदल कमल तथा भूपुर-युक्त यह अर्चन मन्त्र ज्ञानार्णव, विश्वसारतन्त्र तथा मन्त्रमहोदधि आदि में बताये गये नव-योन्यात्मक यन्त्र से सर्वथा भिन्न है; अतः यहाँ बताये गये आवरण-अर्चन का क्रम भी भिन्न है। पात्रासादन के बाद गुरु-पंक्तिपूजन, पीठपूजन, कुलनायिका के आह्वान-पूर्वक षोडशोपचार अर्चन के बाद आवरणदेवताओं के अर्चन का विधान बताया गया है। फलश्रुति बताते हुए कहा गया है कि जो साधक प्रतिदिन इस विधि से कुलनायिका का पूजन करता है, वह भगवान् शिव के समान आप्तकाम हो जाता है। इस पटल में ५० श्लोक हैं।

नवम पटल—पूजन-विधान का निरूपण करने के बाद इस पटल में हवन के लिए कुण्डनिर्माण-विधि का निरूपण किया गया है। इस पटल में चतुरस्र, योनि, अर्धचन्द्राकार, त्रिकोणाकार, वृत्ताकार, षट्कोणाकार, पद्माकार और अष्टकोणाकार—ये आठ प्रकार के कुण्ड तथा पञ्चकोणाकार और सप्तकोणाकार अर्थात् कुल मिलाकर दस रूपाकार के कुण्डों का उल्लेख है। इन कुण्डों का रूपाकार बताने के साथ इनकी गहराई, कुण्डों पर मेखला(ओं) का निर्माण तथा उनका मान, योनि और नाभि के आकार एवं मान का निरूपण किया गया है। पटल के अन्त में कामनाभेद से कुण्डनिर्माण एवं आहुतिमान से कुण्ड के मान का निरूपण किया गया है। इस पटल में ३६ श्लोक हैं।

दशम पटल—कुण्डनिर्माण-विधि बताने के बाद इस पटल में हवन-विधि का निरूपण किया गया है। इष्ट मन्त्र से सुसंस्कृत अग्नि में यथाविधान इष्टदेवता को कल्पोक्त द्रव्य की आहुति देना मन्त्रसाधना का उतना ही अनिवार्य और उतना ही महत्त्वपूर्ण अंग है, जितना महत्त्वपूर्ण है—मन्त्र का जप। विडम्बना यह है कि सुदक्ष एवं कर्मकाण्ड-मर्मज्ञ आचार्यों के सानिध्य के अभाव में आज लोहे या तांबे के कुण्ड में लकड़ी जलाकर उसमें घी और तिल जलाना हवन का पर्याय बन गया है। अतः यह पटल केवल साधकों के लिए ही नहीं; अपितु ज्ञानपिपासु सभी जनों के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसके अन्तर्गत कुण्ड-संस्कार, अग्नि आनयन, वागीश्वरी-पूजन, अग्नि-प्रज्ज्वलन, न्यास, अग्नि के पन्द्रह संस्कार, व्याहृति होम, महागणपति होम, इष्टदेवता का आह्वान तथा उनका पूजन, अंगदेवताओं को आहुति-दान के बाद इष्ट मंत्र से प्रधान हवन के बाद विसर्जनान्त कर्म आते हैं। इस पटल में ७६ श्लोक हैं।

ग्रन्थ के प्रतिपाद्य विषयों की उपर्युक्त पटलवार विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि ग्रन्थ के १० (दस) पटलों में से ६ पटल मन्त्रसाधनापरक और चार पटल नाड़ी-विज्ञान, स्वर-विज्ञान, प्राणायाम तथा कुण्डलिनी-जागरण-प्रभृति हठयोग-परक साधना से

सम्बन्धित हैं। अतः यह सहज जिज्ञासा होती है कि मन्त्र-साधनापरक इस ग्रन्थ में हठयोग-परक उपर्युक्त विषयों के निरूपण को इतना स्थान और महत्त्व क्यों दिया गया? मन्त्र-साधना और कुण्डलिनी-साधना का परस्पर प्रत्यक्ष या परोक्षतः क्या सम्बन्ध है? यदि हम इन पटलों का गम्भीरता से अध्ययन करें तो इनका परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है। श्रीतत्त्वचिन्तामणि की भूमिका में इसका विशद् निरूपण किया गया है। संक्षेप में यह समझ लीजिये कि चाहे मन्त्र-साधना हो, चाहे कुण्डलिनी-साधना; दोनों के लिए मन की एकाग्रता अनिवार्य है। मन की एकाग्रता प्राणायाम पर निर्भर है। इसी तरह इनका परस्पर सम्बन्ध बनता जाता है। इसीलिए देशिकेन्द्र नागभट्ट ने दस में से चार पटलों में उनका निरूपण किया है।

प्रकाशन का इतिवृत

वर्ष १९८३ ईसवीं में दो पृष्ठों की अंग्रेजी भूमिका के साथ प्रकाशित (प्रथम) संस्करण में बताया गया है कि आज से (अर्थात् १९८३ से) लगभग एक सौ-वर्ष पूर्व इसका प्रकाशन हुआ था; मगर कालान्तर में इसकी एक भी मुद्रित प्रति शेष नहीं बची। अतः ग्रन्थ का मूल पाठ और गोविन्दाचार्य की व्याख्या के महत्त्वपूर्ण एवं समझ में आने वाले अंशों को जोड़कर ग्रन्थ का (१९८३ में) प्रकाशन किया जा रहा है। वर्ष १९८३ के बाद इस ग्रन्थरत्न के मूल तथा/अथवा किसी भाषा में व्याख्या-सहित प्रकाशन की कोई सूचना नहीं है। अतः यहाँ प्रस्तुत 'कौलिनी' व्याख्या को इस ग्रन्थ-रत्न का प्रथम हिन्दी व्याख्या होने का गौरव प्राप्त है।

कौलिनी-रहस्य—यद्यपि सरसरी तौर पर इस ग्रन्थ का अध्ययन करने से यह ज्ञात नहीं होता कि यह ग्रन्थरत्न कुलाचार-परक है, मगर तीन स्थलों पर ऐसे अन्तःसाक्ष्य हैं, जो इस ग्रन्थ को कुलाचारपरक सिद्ध करते हैं।

१. प्रथम साक्ष्य है—अष्टम पटल का दूसरा श्लोक; जिसमें कहा गया है कि कुलनायिका की रहस्यपूजा तहखाने में इतने गोपनीय तरीके से की जाय कि उस पर पशुजनों की दृष्टि भी नहीं पड़े। कुलनायिका के रहस्य अर्चन की यह गोपनीयता कुलाचारपरक है। दक्षिणाचारी अर्चन में इस गोपनीयता की जरूरत नहीं है।

२. दूसरा साक्ष्य है—इसी पटल का श्लोक छः जिसमें कुलनायिका के अर्चनयन्त्र लेखन के द्रव्य में 'स्वयम्भू पुष्प' का स्पष्ट उल्लेख है। स्वयम्भू पुष्प और खपुष्प आदि ऐसे द्रव्य हैं, जो केवल कुलाचार में प्रशस्त हैं।

३. तीसरा प्रमाण है—इस ग्रन्थ का अन्तिम श्लोक (१०/६९), जिसमें 'सुसंस्कृत कादम्बरी' (कारणद्रव्य) का कुण्डलिनी-मुख में हवन करने का निर्देश दिया गया है। यह चक्रार्चन की पात्र-वन्दना है।

विषय-सूची

पञ्चम पटल **पृ.सं. ६५-८६**

इक्यावन श्लोकों में निबद्ध इस पटल का प्रतिपाद्य विषय षट्चक्र-विज्ञान है। अतः इस पटल में मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञा—इन चक्रों की शरीर में संस्थिति, इनमें से प्रत्येक चक्र का ध्यान और ध्यानपूर्वक इनमें से प्रत्येक चक्र के भेदन से भूत-भविष्य-दर्शन, वार्द्धक्य-विजय, अजरता-अमरता-प्राप्ति, आकाशगमन-सिद्धि, मृतक को जीवन-दानशक्ति, पूर्व जन्म-स्मृति, देवताओं, गन्धर्वों, यक्षों आदि के साथ परमेश्वर दर्शन आदि फलों के निरूपण-सहित शरीर में स्थित लिंगों, सहस्रार तथा षोडशी कला का वर्णन है।

षष्ठ पटल **पृ.सं. ८७-९८**

अट्ठाईस श्लोकों में निबद्ध इस पटल में स्वयम्भू आदि लिंगत्रय में बाला त्रिपुरा के तीनों बीजों के ध्यान की विधि और ध्यान के फल-निरूपण के बाद कुण्डलिनी के उत्थापन एवं संचालन में दक्ष एवं पटु साधकों द्वारा कुण्डलिनी-मुख में वायु के हवन की अत्यन्त गोपनीय एवं सद्गुरु से प्राप्तव्य विधिविशेष का संकेत दिया गया है। तत्पश्चात् ६ श्लोकों में वागीश्वरी के रूप में कुलनायिका का ध्यान और ध्यानफल का निरूपण है।

सप्तम पटल **पृ.सं. ९९-१०५**

तेईस श्लोकों में निबद्ध इस पटल में तीन प्रकार के यन्त्रों की लेखन-विधि बताई गई है। ये यन्त्र हैं—१. सर्वरक्षाकार त्रैपुर यंत्र, २. कामराज यन्त्र और ३. वशीकरण यंत्र; जिसका नाम नहीं बताया गया है। यन्त्र-लेखन के क्रम में सर्वप्रथम यन्त्र-लेखन हेतु साधक की शारीरिक और मानसिक तैयारी, यन्त्र लिखने के द्रव्य तथा अन्य उपकरणों का विवरण देने के बाद यन्त्र-स्वरूप और उसका लेखनक्रम समझाया गया है। तत्पश्चात् यह बताया गया है कि साधारण मनुष्य ही नहीं; पुराकाल में स्वयं भगवान् शिव, भगवान् विष्णु, प्रजापिता ब्रह्मा, सूर्य, बृहस्पति आदि ने भी इस यन्त्र को धारण किया था। प्राणप्रतिष्ठा- युक्त इस यन्त्र को धारण करने से सभी प्रकार की विपत्तियों और आपदाओं से धारणकर्ता की रक्षा होती है। दूसरा यंत्र कामराज यन्त्र है, जो यथानाम सबको आकर्षित करके वशवर्ती करने वाला है। तीसरे यंत्र का भी यही गुण-धर्म है।

अष्टम पटल पृ.सं. १०६-१२२

५० श्लोकों में निबद्ध इस पटल में कुलनायिका त्रिपुरा के बाह्य अर्चन की विधि विस्तार से बताई गई है। पटल के प्रारम्भ में ही यह बता दिया गया है कि कुलनायिका की यह रहस्यपूजा अत्यन्त गोपनीय स्थान में अत्यन्त गुप्त विधि से सम्पन्न की जाती हैं। पशुभाव में स्थित मनुष्य ही नहीं; गाय-बैल आदि पशु तथा पक्षियों की भी इस पर दृष्टि नहीं पड़नी चाहिए। गोपनीयता की इस अनिवार्यता का निरूपण करने के बाद पञ्चशुद्धि (स्थानशुद्धि, देहशुद्धि, द्रव्यशुद्धि, देवशुद्धि और मन्त्रशुद्धि) का विधान एवं शोधन-मन्त्रों का उद्धार बताया गया है। इसके बाद 'अर्चन यन्त्र' का स्वरूप बताया गया है। त्रिकोण, पञ्चदल कमल, षड्दल कमल, अष्टदल कमल तथा भूपुर-युक्त यह अर्चन मन्त्र ज्ञानार्णव, विश्वसारतन्त्र तथा मन्त्रमहोदधि आदि में बताये गये नव-योन्यात्मक यन्त्र से सर्वथा भिन्न हैं; अतः यहाँ बताये गये आवरण-अर्चन का क्रम भी भिन्न है। पात्रासादन के बाद गुरु-पंक्तिपूजन, पीठपूजन, कुलनायिका के आह्वान-पूर्वक षोडशोपचार अर्चन के बाद आवरणदेवताओं के अर्चन का विधान बताया गया हैं। फलश्रुति बताते हुए कहा गया है कि जो साधक प्रतिदिन इस विधि से कुलनायिका का पूजन करता हैं, वह भगवान् शिव के समान आप्तकाम हो जाता है।

नवम पटल पृ.सं. १२३-१३५

छत्तीस श्लोकों में निबद्ध इस पटल में हवन के लिए कुण्डनिर्माण-विधि का निरूपण किया गया है। इस पटल में चतुरस्र, योनि, अर्धचन्द्राकार, त्रिकोणाकार, वृत्ताकार, षट्कोणाकार, पद्माकार और अष्टकोणाकार—ये आठ प्रकार के कुण्ड तथा पञ्चकोणाकार और सप्तकोणाकार अर्थात् कुल मिलाकर दस रूपाकार के कुण्डों का उल्लेख है। इन कुण्डों का रूपाकार बताने के साथ इनकी गहराई, कुण्डों पर मेखला(ओं) का निर्माण तथा उनका मान, योनि और नाभि के आकार एवं मान का निरूपण किया गया हैं। पटल के अन्त में कामनाभेद से कुण्डनिर्माण एवं आहुतिमान से कुण्ड के मान का निरूपण किया है।

छिहत्तर श्लोकों में संग्रथित इस पटल में हवन-विधि का निरूपण किया गया है। इष्ट मन्त्र से सुसंस्कृत अग्नि में यथाविधान इष्टदेवता को कल्पोक्त द्रव्य की आहुति देना मन्त्रसाधना का उतना ही अनिवार्य और उतना ही महत्त्वपूर्ण अंग है, जितना महत्त्वपूर्ण है—मन्त्र का जप। विडम्बना यह है कि सुदक्ष एवं कर्मकाण्ड-मर्मज्ञ आचार्यों के सान्निध्य के अभाव में आज लोहे या तांबे के कुण्ड में लकड़ी जलाकर उसमें घी और तिल जलाना हवन का पर्याय बन गया है। अतः यह पटल केवल साधकों के लिए ही नहीं; अपितु ज्ञानपिपासु सभी जनों के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसके अन्तर्गत कुण्ड-संस्कार, अग्नि आनयन, वागीश्वरी-पूजन, अग्नि-प्रज्ज्वलन, न्यास, अग्नि के पन्द्रह संस्कार, व्याहृति होम, महागणपति होम, इष्टदेवता का आह्वान तथा उनका पूजन, अंगदेवताओं को आहुति-दान के बाद इष्ट मंत्र से प्रधान हवन के बाद विसर्जनान्त कर्म विवेचित हैं।

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

651

रावण-शिव संवादरूप

उड्डीशतन्त्रम्

रावण-प्रणीत षट्कर्म, इन्द्रजाल, यक्षिणी एवं योगिनी-सिद्धि का प्रामाणिक दुर्लभ ग्रन्थ

हिन्दीटीका सहित

सम्पादक एवं टीकाकार

डॉ. शशिशेखर चतुर्वेदी

एम.ए. पी एच.डी, साहित्याचार्य

प्राचार्य, श्रीनन्दलाल बाजोरिया संस्कृत महाविद्यालय

अस्सी, वाराणसी-221005

आमुख

आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

विषयानुक्रमणी

उत्तरार्द्ध

उल्लू तन्त्र
कौवा तन्त्र
और पशु-पक्षी तन्त्र

(सम्पूर्ण तीनों खण्ड)

लेखक :

के. एल. निषाद (भैरमगढ़ी)

संस्थापक : यक्षिणी तन्त्र, वनस्पति तन्त्र एवं उल्लू और पशु-पक्षी तन्त्र शोध केन्द्र

तथा

आदिवासी क्षेत्रों की प्राचीन लुप्त विद्याओं के गहन अध्ययनकर्ता

और

छत्तीसगढ़ व मध्य प्रदेश के तन्त्र शिरोमणि

मूल्य : ₹ 200.00

अनुक्रम

1432

॥ श्रीहरिः ॥

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

श्रीमद्द्वैपायनमुनि वेदव्यासप्रणीत

श्रीवामनपुराण

(सचित्र, हिन्दी-अनुवादसहित)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

गीताप्रेस, गोरखपुर

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

बिट्ठलदास संस्कृत सीरीज
३४
****

कृष्णद्वैपायनमहर्षिव्यासविरचितम्-

वराहपुराणम्

विस्तृत भूमिका, हिन्दी अनुवाद एवं श्लोकार्धानुक्रमणिका सहित

अनुवादक एवं सम्पादक
डॉ. सुरकान्त झा
ज्यौतिषशास्त्राचार्य, शिक्षाशास्त्री
पी-एच. डी

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी
वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

❖❖❖

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
३२१

श्रीभास्कररायमखिना प्रणीतम्

वरिवस्यारहस्यम्

भास्कररायप्रणीत-**प्रकाश**-संस्कृतव्याख्यया
सरोजिनी-हिन्दी-व्याख्यया च संवलितम्

हिन्दी व्याख्याकार
डा० श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द'
एम.ए., एम.एड्., पी-एच्.डी., डी.लिट्

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

द्वितीयोंऽशः

—*—

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
३२१

श्रीभास्कररायमखिना प्रणीतम्

वरिवस्यारहस्यम्

भास्कररायप्रणीत-**प्रकाश**-संस्कृतव्याख्यया
सरोजिनी-हिन्दी-व्याख्यया च संवलितम्

हिन्दी व्याख्याकार
डा० श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द'
एम.ए., एम.एड्., पी-एच्.डी., डी.लिट्

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

द्वितीयोंऽशः

कृष्णदास संस्कृत सीरीज
२९७
****

महर्षिकृष्णद्वैपायनव्यासविरचितम्

श्रीवायुमहापुराणम्

संस्कृत मूल, हिन्दी अनुवाद एवं श्लोकानुक्रमणिका सहित

सम्पादक एवं अनुवादक
डॉ० सुधाकर मालवीय
एम.ए., पीएच. डी., साहित्याचार्य
पूर्व विद्वान्, पुराण विभाग
काशिराजट्रस्ट, दुर्ग रामनगर, वाराणसी
(लब्धावकाश) संस्कृतविभाग, कलासङ्काय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
एवं
पं० चित्तरञ्जन मालवीय
रीडर पुराणविभाग
महामना संस्कृत अकादमी

(प्रथम भाग)

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी
वाराणसी

श्रीमद्वायुमहापुराणस्य विषयानुक्रमणिका

॥ इति श्रीमद्वायुमहापुराणविषयानुक्रमणिका ॥

विषय सूची

* * *

कृष्णदास संस्कृत सीरीज
२९७
****

महर्षिकृष्णद्वैपायनव्यासविरचितम्

श्रीवायुमहापुराणम्

संस्कृत मूल, हिन्दी अनुवाद एवं श्लोकानुक्रमणिका सहित

सम्पादक एवं अनुवादक
डॉ० सुधाकर मालवीय
एम.ए., पीएच. डी., साहित्याचार्य
पूर्व विद्वान, पुराण विभाग
काशिराजट्रस्ट, दुर्ग रामनगर, वाराणसी
(लम्बावकाश) संस्कृतविभाग, कलासङ्काय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
एवं
पं० चित्तरञ्जन मालवीय
रीडर पुराणविभाग
महामना संस्कृत अकादमी

(द्वितीय भाग)

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी
वाराणसी

श्री श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः

Vaikhanasiya

VIMĀNĀRCHANA KALPA

(Sage Marichi Samhita)

श्रीवैखानसे - भगवच्छास्त्रे

विमानार्चनाकल्पाः

वैखानस - व्याक रणपण्डित, व. रघुनाथचक्रवर्ति भट्टाचार्यैण

व्याक रणपण्डिन श्री सेतु माधवाचार्यैण च

संशोधितः

वैखानसागम चुडामणि

माडंबाकं कृष्णस्वामि श्रीनिवास भट्टाचार्यैः

T.T.D. वैखानसागम अस्थान पंडितैः

परिशीलितः

प्रकाशकाः

तिरुमल - तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

1998

मरीचिसंहिता विमानार्चनकल्पस्थ

विषयानुक्रमणिका

चतुर्थः पटलः

पञ्चमः पटलः

षष्टः पटलः

सप्तमः पटलः

अष्टमः पटलः

नवमः पटलः

दशमः पटलः

एकादशः पटलः

द्वादशः पटलः

त्रयोदशः पटलः

चतुर्दशः पटलः

एकोनविंशः पटलः

विंशः पटलः

एकविंशः पटलः

द्वाविंशः पटलः

त्रयोविंशः पटलः

चतुर्विंशः पटलः

पंचविंशः पटलः

षड्विंशः पटलः

सप्तविंशः पटलः

अष्टाविंशः पटलः

एकोनत्रिंशः पटलः

त्रिंशः पटलः

एकत्रिंशः पटलः

द्वात्रिंशः पटलः

त्रयस्त्रिंशः पटलः

चतुस्त्रिंशः पटलः

पंचत्रिंशः पटलः

षट्त्रिंशः पटलः

सप्तत्रिंशः पटलः

अष्टत्रिंशः पटलः

एकोनचत्वारिंशः पटलः

चत्वारिंशः पटलः

चतुष्पंचाशत्तमः पटलः

पंचपंचाशत्तमः पटलः

षट्पंचाशत्तमः पटलः

सप्तपंचाशत्तमः पटलः

अष्टपंचाशत्तमः पटलः

एकोनषष्टितमः पटलः

षष्टितमः पटलः

एकषष्टितमः पटलः

द्विषष्टितमः पटलः

त्रिषष्टितमः पटलः

चतुः षष्टितमः पटलः

पंचषष्टितमः पटलः

षट्षष्टितमः पटलः

एकोनसप्ततितमः पटलः

सप्ततितमः पटलः

एकसप्ततितमः पटलः

द्विसप्ततितमः पटलः

एकोनाशीतितमः पटलः

अशीतितमः पटलः

एकाशीतितमः पटलः

द्व्यशीतितमः पटलः

त्र्यशीतितमः पटलः

चतुरशीतितमः पटलः

पंचनवतितमः पटलः

सप्तनवतितमः पटलः

अष्टनवतितमः पटलः

एकोनशततमः पटलः

शततमः पटलः

एकशततमः पटलः

।। विषयानुक्रमणिका सम्पूर्णा ।।

॥ श्री: ॥
चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
496

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

भाषाभाष्योपेतम्

पूर्वार्द्धम् * प्रथमो भागः

(आदित एकादशश्वासात्मकः)

भाषाभाष्यकार:
श्री कपिलदेव नारायण
'स्वरूपावस्थित'

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमणी

विषयाः **पृष्ठाङ्काः**

प्रथमः श्वासः

द्वितीयः श्वासः

तृतीयः श्वासः

चतुर्थः श्वासः

पञ्चमः श्वासः

अष्टम: श्वास:

नवमः श्वासः

दशमः श्वासः

एकादशः श्वासः

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
496

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

भाषाभाष्योपेतम्

पूर्वार्द्धम् * द्वितीयो भागः

(द्वादशत अष्टादशश्वासात्मकः)

भाषाभाष्यकारः
श्री कपिलदेव नारायण
'स्वरूपावस्थित'

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमणी

त्रयोदशः श्वासः

चतुर्दशः श्वासः

अथ सप्तदशः श्वासः

॥ श्रीः ॥
चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
496

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

भाषाभाष्योपेतम्

उत्तरार्द्धम् * प्रथमो भागः

(एकोनविंशतिश्चतुर्विंशश्वासात्मकः)

भाषाभाष्यकारः
श्री कपिलदेव नारायण
'स्वरूपावस्थित'

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमणी

विषयाः	पृष्ठाङ्काः

एकोनविंश श्वासः

विंशः श्वासः

एकविंशः श्वासः

द्वाविंशः श्वासः

त्रयोविंश: श्वास:

चतुर्विंशः श्वासः

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
496

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

भाषाभाष्योपेतम्

उत्तरार्द्धम् * द्वितीयो भागः

(पञ्चविंशतित्रिंशश्वासात्मकः)

भाषाभाष्यकारः

श्री कपिलदेव नारायण

'स्वरूपावस्थित'

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमणी

विषयाः	पृष्ठाङ्काः	विषयाः	पृष्ठाङ्काः

पञ्चविंश श्वासः

षड्विंश श्वासः

सप्तविंश श्वासः

अष्टाविंश श्वासः

एकोनविंश श्वासः

त्रिंशविंश श्वास:

॥ श्रीः ॥
चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
496

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

भाषाभाष्योपेतम्

उत्तरार्द्धम् * तृतीयो भागः

(एकत्रिंशतः षट्त्रिंशश्वासात्मकः)

भाषाभाष्यकारः
श्री कपिलदेव नारायण
'स्वरूपावस्थित'

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

विषयानुक्रमणी

त्रयस्त्रिंशः श्वासः

चतुस्त्रिंशः श्वासः

पञ्चत्रिंशः श्वासः

षट्त्रिंशः श्वासः

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

१९४

शिवोपदिष्टः

विज्ञानभैरवः

श्रीक्षेमराजाचार्यविरचितविवृतिभागोत्तरं
श्रीशिवोपाध्यायविरचितविवृत्त्युपेतः

कारिकानुवाद-विवृतिभागस्थहिन्दीव्याख्योपेतः

व्याख्याकार

श्रीबापूलाल 'आञना'

प्रवक्ता : संस्कृत विभाग

ज० ला० नेहरू स्मारक पोस्ट-ग्रेजुएट कालेज

महाराजगंज, गोरखपुर

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

	कारिका	पृष्ठाङ्क

परिशिष्ट

क्षेमराज श्रीकृष्णदासेन सम्पादितस्य मुम्बई श्री वेंकटेश्वरस्टीम मुद्रणालयेन प्रकाशितस्य पुनर्मुद्रणम्

श्रीविष्णुधर्मोत्तरपुराणम्

THE VIṢṆUḌHARMOTTARAPURĀṆAM

देहलीस्थेन प्रो० डा० चारुदेवशास्त्रिणा प्रणीतया भूमिकया सनाथितम्
नागशरणसिंह सम्पादितश्लोकानुक्रमण्या च सहितम्

NAG PUBLISHERS
11 A/U.A. (POST OFFICE BUILDING) JAWAHARNAGAR, DELHI-7.
INDIA

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ विष्णुधर्मोत्तरमहापुराणविषयानुक्रमणिकाप्रारम्भः ।

२

॥ इति प्रथमखण्डः ॥

अथ द्वितीयखण्डः ।

इति विष्णुधर्मोत्तरद्वितीयखण्डः ।

अथ तृतीयखण्डः ।

॥ इत्यनुक्रमणिका समाप्ता ॥

॥ ॐ ॥

श्रीविष्णुपुराण

(सचित्र, हिन्दी-अनुवादसहित)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

अनुवादक

श्रीमुनिलाल गुप्त

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

अनन्तशयनसंस्कृतग्रन्थावलिः ।

ग्रन्थाङ्कः

विष्णुसंहिता

संस्कृतग्रन्थप्रकाशनकार्याध्यक्षेण
लण्डनपुरस्थराजकीयैष्याखण्डीयविद्यासेवकसमाजपूज्यसभ्यपदभाजा
पिहेच्. डि. (ट्टबिङ्गन्) पदसत्कृतेन
महामहोपाध्यायेन
त. गणपतिशास्त्रिणा
संशोधिता ।

सा च
अनन्तशयने
महामहिमश्रीसेतुलक्ष्मीमहाराज्ञीशासनेन
राजकीयमुद्रणयन्त्रालये तदध्यक्षेण
मुद्रयित्वा प्रकाशिता ।

कोलम्बाब्दाः ११०१, क्रैस्ताब्दाः १९२५.

विषयानुक्रमणी।

तिरुपति-राष्ट्रियसस्कृतविद्यापीठग्रन्थमाला—सख्या-१३
Rashtriya Sanskrit Vidyapeetha, Tirupati Series No. 13

विश्वामित्रसंहिता
VIŚVĀMITRA SAṀHITĀ

तिरुपतिकेन्द्रीयसस्कृतविद्यापीठस्य प्रवाचकेन
डा. उ. शङ्करभट्टेन
पाठभेदादिभिः संशोध्य संपादिता

राष्ट्रियसंस्कृतविद्यापीठम्, तिरुपतिः
१९९१

विषयानुक्रमणिका

॥ श्रीः ॥

काशी संस्कृत ग्रन्थमाला

८३

महर्षिप्रवरपतञ्जलिप्रणीतं

योगसूत्रम्

पण्डितप्रवरधाराधिपतिभोजराजकृतेन **राजमार्तण्डेन** दार्शनिक-
शिरोमणिभावागणेशविरचितेन **प्रदीपेन** पं० नागोजीभट्टनिर्मितया
वृत्त्या यतिप्रवर-रामानन्दविहितया **मणिप्रभया** विद्वद्वरानन्तदेव-
सम्पादितया **चन्द्रिकया** योगिराज पं० सदाशिवेन्द्र-
सरस्वतीकृतेन **योगसुधाकरेण** च समन्वितम्

वाराणसीस्थनित्यानन्दवेदविद्यालये मुख्याध्यापकेन न्यायाचार्य-काव्यतीर्थ-

पं० ढुण्ढिराजशास्त्रिणा

पाठान्तरेण टिप्पण्या च समलङ्कृत्य संशोधितम्

डा० महाप्रभुलालगोस्वामिकृतया
विस्तृतहिन्दीभूमिकया समेतम्

चौखम्भा संस्कृत संस्थान

भारतीय सांस्कृतिक साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक

पो० आ० चौखम्भा, पो० बा० नं० १३९

जड़ाव भवन, के. ३७/११६, गोपाल मन्दिर लेन

वाराणसी (भारत)

पातञ्जलदर्शनविषयसूची

विषयसूची

YOGIC TECHNIQUES

Dr. Manohar L. Gharote

2006

The Lonavla Yoga Institute (India)

Lonavla - 410 401

Contents

योगिनीहृदयम्

व्रजवल्लभद्विवेदः



विषय-सूची

उपोद्घात

१. चक्रसंकेत

२. मन्त्रसंकेत

३. पूजासंकेत

परिशिष्ट

•

॥ श्रीः ॥

देवादिदेवमहादेवजी प्रणीत

योगिनीतन्त्र ।

★

मुरादाबादनिवासी पण्डित कन्हैयालालमिश्र
कृतभाषानुवादसहित.

इसको

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदासने
अपने "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापेखानेमें
छापकर प्रसिद्ध किया ।

सम्वत् २०१३, शके १८७८.

कल्याण-मुंबई.

श्रीः ।

योगिनीतंत्रकी अनुक्रमणिका ।

योगिनीतन्त्रके पूर्वखण्डकी अनुक्रमणिका समाप्त।

योगिनीतंत्रके उत्तर खंडकी अनुक्रमणिका।

योगिनीतंत्रकी अनुक्रमणिका ।

योगिनीतंत्रके उत्तर खंडकी अनुक्रमणिका समाप्त ।